गीताम्बरा

श्री श्याम श्रोत्रिय के
'द्वार तुम्हारे' - 'मन आँगन में'
और
जाग-जाग भारती' गीत सग्रहों
का समवेत प्रकाशन

प्रकाशक
राजस्थान प्रकाशन
जयपुर

गीताम्बरा

● *प्रकाशक*
राजस्थान प्रकाशन
28-29 त्रिपोलिया बाजार
जयपुर 302 002

● कम्प्यूटर
मनीष कम्प्यूटर सेंटर मथुरा (0565) 408103 (R)

● मूल्य दो सौ रुपये मात्र

● मुद्रक
शीतल ऑफसैट प्रिंटर्स
जयपुर



श्री श्याम श्रोत्रिय

समर्पण

प्रिय-प्रसून जन्म जो न ले सका,
प्रिय-कली जो जी सकी न खिल सकी।
अश्रु-सिक्त समर्पण उस याद को,
वंचिता जो रह गई दुलार से ॥

साधकर मिलन-विछोह की डगर,
साथ जो चले कि हमसफर बने ।
हास-अश्रु से सदा सजी रही,
प्रीति-सिक्त समर्पण उस याद को ॥

अन्तर की रंग-रूप-ज्योति जो,
गीत-सृष्टि में सदा मुखर हुई ।
है समर्पणित अशेष भाव से,
प्रणय से प्रदीप्त प्राण-प्राण को ॥

डॉ शिवमगल सिह 'सुमन'

अध्यक्ष
कालिदास अकादमी
विश्वविद्यालय माग
उज्जैन 456010
दूरभाष 554545
फैक्स 0734 534545

प्रिय श्री श्रोत्रिय जी

आपका २ जुलाई १९९९ का पजीकृत पत्र प्राप्त हुआ । उसके साथ ही शीघ्र प्रकाश्य 'गीताम्बरा' काव्यकृति के तीनो अगो (१) द्वार तुम्हारे (२) मन आँगन मे और (३) जाग जाग भारती के सकलित अशो की पाण्डुलिपि भी । इतर व्यस्तताओ के बीच जितना भी समय मिल पाया उनका पारायण कर प्रसन्नता हुइ ।

द्वार तुम्हारे' के रूप मे सग्रहीत गीत मुझे सहज मार्मिक ओर प्राजल लगे । उसकी रचना ओ उदार' तो इस प्रभाग के आमुख जैसी है जिसमे कवि के सर्वस्व समर्पण की भावना मुखर हो उठी है । इसी अग के अन्तगत ओ सपनो' की छाया शीषक रचना का प्रथम छन्द—

ओ सपनो की छाया
रजनी के पखो पर आना
सोए मन की पीर जगाना
किसने तुम्हे सिखाया ?

पढकर अनायास ही हिन्दी के मर्ममधुर कवि प० सुमित्रानन्दन पत की प्रसिद्ध रचना 'प्रथम रश्मि की याद हो आयी –

प्रथम रश्मि का आना रगिणि
तूने कैसे पहिचाना ?
कहाँ कहाँ हे बाल विहगिनि
पाया तूने यह गाना ?

आधुनिक कवि–२ श्री सुमित्रानन्दन पत
प्रथम रश्मि–पृष्ठ–३ प्रकाशक हिन्दी साहित्य
सम्मेलन प्रयाग सवत १९९८

इन आत्माभिव्यजक गीतो की भाषा मे भी एक प्रकार का मादन है । कही कही तो इनके बिम्बात्मक स्वरूपो मे महाकवि कालिदास की मान्त्रपरकता प्रतिबिम्बित दिखाइ पडती है । यथा- याद तुम्हें भी आती होगी गीत मे –

नभ मे वन्दनवार बनाते
राजहस चुपके से जाते ।

आकाश मे उडती हुई राजहसों की पाँतो को वन्दनवार बनाने की कल्पना महाकवि के सौन्दयबोध की झलक दे जाती है । रघुवश मे महारानी सुदक्षिणा के साथ गुरुदेव वशिष्ठ के आश्रम की ओर जाते हुए महाराजा दिलीप का माग की नैसर्गिक छटा के वैविध्य पर मुग्ध होने का वर्णन करते हुए महाकवि लिखते हैं –

श्रेणीबन्धाद्वितन्वद्भिरस्तम्भा तोरणस्रजम् ।
सारसै कलनिर्हादै क्वचिदुन्नामिताननौ ।।

रघुवश– प्रथम सग –श्लोक– ४१

अर्थात–कभी जब वे (सुदक्षिणा एव दिलीप) आँख उठाकर ऊपर देखते तो आकाश मे उडते हुए और मीठे बोलने वाले बगुले भी एक पाँत मे उडते हुए ऐसे जान पडते थे मानो खम्भो के बिना ही वन्दनवार टँगी हो।

निश्चय ही कल्पना की यह समानन्तरता हृदयग्राही है । किन्तु व्याकरणगत समाधि शैथिल्य के कारण सुन्दर सुकुमार कल्पनापूण दूसरी पक्ति की अभिव्यक्ति आहत हो गई । व्याथासिक्त दमयन्ती के स्वरूप की लाक्षणिक अभिव्यक्ति पीर नहायी प्राणो की दमयन्ती को तुक के आग्रह से अधीर बनाती के स्थान पर बनाते के प्रयोग ने अस्त व्यस्त कर दिया । इसी अग के अन्य सुन्दर सुकुमार गीता में कवि के सामथ्य के प्रचुर प्रमाण उपलब्ध हें । यथा– फिर अधूरी रह गई अपनी कहानी शीषक के अन्तगत कवि के कौशल का यह स्वरूप प्रत्यक्ष परिलक्षित किया जा सकता है –

तरसते ही रह गये सपने मगर
साँस का आँचल सिमटता जारहा
धूप–छाया के भ्रमित ससार में
जिन्दगी बेमोल सी यू ही बिकानी ।
फिर अधूरी रह गयी अपनी कहानी ।।

इसमें सुख–दुख के लिए धूप–छाया के प्रतीक का प्रयोग और बाजार में बगोल बिकने के रूपक में अभिव्यन्जना का सौन्दर्य निखरता दिखाई पड़ता है । और भी–

याद की पगडंडियों में फिर भटकती
जिन्दगी यूँ ही पड़ेगी अब बितानी ।

अथवा

दृष्टि के दीपक अनाश्रित से थके से
चिर व्यथा के साथ बुझते जा रहे हैं ।

याद की पगडंडियो मे भटकती या अनाश्रित दीपक के बुझने की व्यजनाएँ अर्थगर्भित भी हैं और मार्मिक भी । वस्तुत यह समस्त गीत ही अन्तव्यन्जक सौन्दयबोध से समलकृत हे ।

यह तो सर्वविदित है कि गीतिकाव्य मे (१) आत्माभिव्यजकता होनी चाहिए (२) भावो की तीव्रता होनी चाहिए (३) सक्षिप्तता एव अभिव्यक्ति की कसावट होनी चाहिए और (४) भावान्विति होनी चाहिए । कवि की रचनाओ मे एसे परिष्कृत प्रयोग यत्रतत्र बिखरे दिखाइ पडते है –

तारो को आमन्त्रण देता
सूरज डूब रहा है ।
बीती बातों में डूबा मन
तुम बिन ऊब रहा है ।
नभ पर चाँद चला आयेगा
फिर मुझको वह तरसायेगा ।
यह सब कुछ सहना ही होगा
अब तक खूब सहा है ।।

यह बडा सरस और मार्मिक गीत है इसकी सहजता सराहनीय है । उदू मे इसी को 'सहले मुम्तना' कहते हैं । जिसका अन्वय न करना पडे जेसे बातचीत कर रहे हो । फिर भी सजक के लिए सतकता आवश्यक है । प्रथम छन्द मे डूबना के स्थान पर भूला या खोया या अन्य कुछ प्रयोग हो सकता था । डूब रहा या डूबा मन का एक ही पद मे एक साथ प्रयोग बचाया जा सकता था । गरज कि सजक को कदम–कदम पर चौकन्ना रहने की आवश्यकता होती है । यो यह एक विकल्प मात्र

है डूबा मन भी चल सकता है । मेरा तात्पर्य केवल इतना ही है कि सजक को बडी सयमशीलता एव सावधानता से शब्द स्पश रूप रस और गध का नियोजन करना पडता है । एक एक शब्द तौल तौलकर उसकी ध्वनि का परीक्षण कर लाक्षणिकता या मुहावरेदानी की सटीकता पर विचार कर रचना की साथकता मे डूबना उतराना पडता है । बिहारी के उस दोहे की मार्मिकता से तो आप परिचित ही होगे कि –

तन्त्रीनाद कवित्तरस सरसराग रतिरग ।
अनबूडे बूड तरे जे बूडे सब अग ।।

वस्तुत सत्यनिष्ठा और सवेदनशीलता ही सजना का मूलाधार होती है । महीयसी महादेवी के शब्दो मे 'सत्य साहित्य का साध्य और सौन्दय उसका साधन है ।

इसी दृष्टि से मैंने अन्य रचनाओ मे यत्रतत्र जो काट छाँट की है उसे अन्यथा न समझे । ये सकेत मात्र हैं आपके स्वय के शब्द–शोधन और अभिव्यन्जन सयोजन के । रवीन्द्रनाथ भी आखिरी दम तक अपनी अभिव्यन्जनाओ को सँवारते रहते थे । शायद आपने कामायनी की वह प्रति देखी होगी जिसे आचाय केशवप्रसाद मिश्र को सुनाकर प्रसाद जी उनके सुझावो अथवा सशोधनो को शिरोधाय करते थे । आपकी वाणी मे विदग्धता और भाषा मे सुचारुता है केवल अभिव्यक्ति को माँजने की आवश्यकता है ।

हार्दिक मगल कामना सहित ।

निवास 'समर्पण'
उदयन माग उज्जैन 456010
दूरभाष 551250

शुभेच्छु

शि० म० सुमन

डॉ कुँवर बेचैन
एम० काम० एम० ए० पी-एच० डी० डी० लिट (मानद)

रीडर एव अध्यक्ष
हिन्दी विभाग
एम० एम० एच० महाविद्यालय
गाजियाबाद (उ० प्र०) 201001
दूरभाष-0575 712958

गीताम्बरा– सौंधी मिटटी पर पहली फुहार

जैसे सौंधी मिटटी पर पहली–पहली फुहार जैसे क्यारी मे किसी फूल के पौधे की डाली पर खिला हुआ प्रथम पुष्प जैसे माँ के चरणो मे पूजा–भाव से अर्पित फूलो का प्रथम स्पश जैसे फूल की पखुरियो पर आकाश की अपनी इच्छा से टपकी हुइ ओस की तरल बूँद जैसे गडरिये की बॉसुरी से फूटा हुआ प्रथम स्वर हाँ ऐसे ही गीत हैं कविवर श्याम श्रोत्रिय के । उनके गीतो की शब्द–पखुरिया जब खुलती है और उनमे रूप–रग और गध के जो स्पश मिलते हैं वे देह से आत्मा तक उतरने वाले हैं ।

गीत की पहली विशेषता वैयक्तिकता है । उसमे कवि–मन की व्यक्तिगत अनुभूतियो की लयात्मक अभिव्यक्ति होती है । और मन की दुनियॉ तो निराली है ही । कैसी–कैसी घटनाऍ हैं उसमे कैसे-कैसे चित्र हैं उसमे कैसे–कैसे रिश्तो की महक है उसके ऑगन मे । बाते अनवरत सपने और न जाने क्या –क्या । यही कारण है कि गीत को काव्य के क्षत्र की वह सशक्त, सयत अनुभूतिपरक आर भावपूण विधा माना गया है जिसमे व्यक्ति–मन के माध्यम से सम्पूण जगत की विविध सवदनात्मक छवियो के दशन होते हैं ।

हॉ श्रोत्रिय जी की इस काव्यकृति मे ऐसी ही अनेक छवियॉ हैं जिनकी झलक दशक के मन को बरबस अपनी ओर खीच लेती है । ऐसी भाव–तरगे है जो मन को कही–से–कही बहाकर ले जाती हैं । अवचेतन

के हाथ की ऐसी मर्मस्पर्शी नाजुक अंगुलियाँ हैं जिन्हे पकडकर उनके दशारो पर उनके साथ साथ घूमने का मन करता है । स्मृति की वे वीथियां है जिनमे टहल टहल कर कोई भी आत्म साक्षात्कार करले । जब उनकी स्मृति के आंगन मे कोई दो पछी उतर आते हैं तो ये पछी केवल उनके आँगन की धरोहर ही नहीं रहते वरन उनकी छाया हमारे–तुम्हारे मन पर भी पडती है और तब हममे भी किन्ही दो ऐसे पछियो के छाया–चित्र उभर आते है जो नितात हमारे ही होते हैं । लेकिन पछी तो उडने के लिए है । हमेशा एक जगह कहाँ रह पाते हैं .. एक भी पछी उडा तो दूसरा अकेला रह गया । फिर स्मृतियो की गलियाँ गीली हो गइ फिर आँखो की कोरो मे आँसू आ बैठे । .. .. और अचानक कह उठे मिल जाता यदि साथ तुम्हारा ये जीवन यों भार न होता ....

लेकिन जिससे विगत जन्मो का नाता हो वह तो सतायेगा ही । वो तो मन की छाया बनकर सौ–सौ बार छलेगा ही । इधर कोई मिट रहा होगा उधर कोइ मुस्करा रहा होगा .. .. इधर कोइ रो रहा होगा उधर कोई गारहा होगा लेकिन पीर तो पीर है वह भला एक जनम मे मिटने वाली है .. ? तब ही तो कवि मन कह उठता है –

ऐसा दर्द दिया है तूने
जनम–जनम तक पीर न जाये ..

श्री श्रोत्रिय के गीतो का एक दूसरा पहलू भी है और वह है बाह्य ससार की पीडाओ का अनुभव । ये उनकी व्यक्तिगत पीडा नही है वरन् यह पीडा है जो दूसरो की पीडा से जन्मी है । दर्द चाहे किसी का हो अपने साथ–साथ किसी न किसी को आन्दोलित करता ही है । .. और कवि कवियो मे भी गीतकार तो और भी ज्यादा सवेदनशील प्राणी होता है । यो तो 'सारे जहाँ का दर्द हमारे जिगर में है' की शैली मे कुछ न कुछ कहता रहता है । यह कहन उसकी अपनी शैली है किन्तु जो कुछ उसके माध्यम से कहा जाता है वह उस कराह की अभिव्यक्ति होता है जो कही से कवि के कान तक पहुँची है ऐसी ही किसी कराह को सुनकर कवि श्रोत्रिय कहते है –

कही न सुख का स्वर सुन पाता
वसन बिना मेहनतकश बाँहे
थकती जाती भीगी आहे
उजडी सूनी–सी कुटियो का
बुझता दीपक शीश झुकाता ।
कही न सुख का स्वर सुन पाता ।।

श्रोत्रिय जी के गीतो का तीसरा बिन्दु है राष्ट्र–प्रेम । इसीलिए वे राष्ट्र की तरुणाइ को जगाकर उसे पुकारते है और यह पुकार भारत माँ के दु ख –दद को मिटाने के लिए है । जहाँ जन्म लिया उस मातृभूमि का कज भी तो हम पर है उससे उऋण होने के काय भी तो करते रहने चाहिए । इसीलिए वे कहते हैं –

देश के तरुण उठो
रक्तमय अरुण उठो
अब उठो सपूत भारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

गरीबी और अमीरी के बीच की खाई उनके असीम अन्तर की ओर भी कवि का ध्यान गया है । वह कह उठा है –

एक ओर रोशनी दमक रही
एक ओर अन्धकार छा रहा
एक ओर है खडा नया महल
बार–बार झोंपडी गिरा रहा ।

कवि को इस दद का एहसास है और यह विश्वास भी –

सत्य शिव सुन्दर क अमृत से
गेह–गह द्वार–द्वार महकेगा
शोषण की कारा से मुक्त हो
तृप्ति का नया विहान चहकेगा ।

इस प्रकार श्रोत्रिय जी के गीत उपयुक्त तीन बिन्दुओ से गुजरने

वाली वह सरल रेखा है जिस पर नए-नए अर्थों से लबालब भरे शब्दो के नये नये आयाम दृष्टिगोचर होते हैं । उनके गीत एक ओर कोमल भावनाओ के सस्पर्शो से भरे है तो दूसरी ओर जीवन की उस खुरदुरी भूमि का भी स्पर्श कराते हैं जिन पर खडे हो कर एक अलग सी चुभन महसूस होती है । कुल मिलाकर गीत पठनीय हैं कवि को मेरी बधाई

आवासीय पता –
२ एफ–५१
नेहरू नगर गाजियाबाद (उ० प्र०)

कुँवर बेचैन

डॉ तारा प्रकाश जोशी, आइ० ए० एस०
पूव निदेशक
प्राथमिक एव माध्यमिक शिक्षा राजस्थान

श्री श्याम श्रोत्रिय ने अपने गीत सग्रह 'गीताम्बरा' के प्रकाशन के पूर्व सम्मति लिखने का अवसर देकर मुझे गौरव दिया है । वस्तुत उनके गीत तीन सग्रहो मे प्रकाशित होने चाहिए थे लेकिन उन्होने इन तीन सग्रहो को एक कर प्रकाशित करने का निश्चय किया है ।

श्री श्याम श्रोत्रिय बहुत भाव–प्रवण कवि हैं । ये अपने भीतर को भी पहचानते हैं ।

मुझको सौ–सौ बार छला रे
तुमने मेरे मन की छाया ।

जीना भी सब व्यर्थ हो गया
कैसा अरे अनर्थ हो गया
अर्थहीन उच्छवास रह गये
कुछ भी मेरे हाथ न आया ।

उनके अन्तमुखी गीतों मे आगे उनके ह्रदय के गीत हैं ।

तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।
झलकता रहा अर्चना–दीप मेरा
छलकता रहा है सदा गीत मेरा ।
महकता रहा सास का ये बसेरा
सँम्भलता रहा स्वर सजाता रहा हूँ ।
तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।

उनके इस तरह के सारे गीत उनके प्रेम–गीत हैं ।

जिन्दगी का तुम चिराग हो
गीतों मे प्रीत–राग हो
उम्र के सुहाग हो तुम्ही
तुम्ही स्वप्न के श्रृगार हो ।

श्वाँस के सफर में साथ दो
थक चुका हूँ अपना हाथ दो ।
चाहती है धूलि राह की
वह हर चरन मे साथ–साथ हो ।

ये चतुष्पदियॉ भुलाये नही भूलती । उनके इस सग्रह मे ऐसी अनेक रचनाऐ हैं जिनमे देश का ललकार हे ओर विशेषतार पर तरुणो को ।

देश के तरुण उठो
रक्तमय अरुण उठो
अब उठो सपूत भारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

वे निर्माण के गायक हैं ध्वस के नही । ये देशप्रेम मे भी उन लोगो से भिन्न हैं जो ध्वस को हवा देते हैं । उनका मुक्ति–दिवस का गीत इसका साक्षी है ।

नीव मिलकर नई जिन्दगी की धरो
पीर जननी जनम–भूमि की सब हरो
नव–सृजन के साथी अब बनो देवता
स्वर्ग अपनी धरा पर स्वय आरहा ।
ध्वस उत्पात के मोड को छोड़ दो
ध्वज उड़ाता दिवस मुक्ति का गा रहा ।।

ये शहीदो के बलिदान से प्रेरणा लेते हैं भारत की मिटटी से प्रेरणा लेते हैं और भारत के अनन्य पुजारी हैं । ऐसे महामना कवि के सग्रह पर सम्मति लिखकर मैं गौरवान्वित अनुभव करता हूँ । मुझे विश्वास है कि हिन्दी जगत इनके इस सग्रह का बहुत हार्दिक स्वागत करेगा । मैं उनके कवि का अभिनन्दन करता हूँ ।

निवास का पता –
सी–१२१ मगल मार्ग
बापूनगर जयपुर
फोन –५१३८०६

तारा प्रकाश जोशी

हरीश भादानी छबीली घाटी बीकानेर 334005
सम्पादक–वातायन दूरभाष 522451

रचना के तीन ससार देखता हुआ

श्री श्रोत्रिय के रचना ससार की इस त्रयी से गुजरते हुए मुझे अनूठा अनुभव हुआ । सोचने लगा काश ऐसी भाव–प्रवण भाषा मेरे पास होती तो इतने विशाल 'स्थूल' मे मन–भावन 'सूक्ष्म को मैं भी खोजता ।

कवि के गीतो मे दूरागत वशी का स्वर प्राणो मे सोई पीर जगाता है तो वह कामना करता है – 'उस किनार ले चलो मॉझी मुझे । यूँ स्वराते शब्दो ने सन् १६५३ से १६६८ तक की यात्रा मे केवल अन्तमन को ही नही खगाला वरन बाहर के आस–पास को भी पेनी दृष्टि से देखा है । फलस्वरूप प्रस्तुत हुए हैं रचना यात्रा के तीन आयाम– 'द्वार तुम्हारे मन आँगन में और जाग जाग भारती ।

इन तीनो आयामो मे श्री श्रोत्रिय ने भाषा तो साधी ही हे ऐसे छन्द भी साधे हैं जो पाठक को गीता की आन्तरिक लय तक ले जाते हैं । यहाँ मुझे कहना है कि आज की कविता का एक बडा हिस्सा आन्तरिक लय और रागतत्व से अलग रहा है । राग के निर्वाह के लिये वणिक–मात्रिक छन्द जरूरी नही– वह तो माध्यम हैं । अत श्री श्रोत्रिय ने अपने मौलिक छन्दो के माध्यम से अपनी बात कही है –

आग की सवारी कर जाना है दूर
शायद सफर सुखद हो जाये ...
यह 'शायद उनके चरैवेति रूप को दिखाता है–

समय के सच को सँजोता
मैं निरन्तर चल रहा हूँ ।

रचनाकर्मी की इस सकल्पना मे जहाँ मुझे भाषा का नया निकोर रूप उघडता दीखता हे वहीं निजी छन्द का भी आभास मिलता है ।

भाव–प्रवण भाषा का आधिक्य अवश्य है पर जहाँ तहाँ कवि ने अपने आपको खुरदुरा बनाने का प्रयास भी किया है । यह प्रयास आज के समय की बडी आवश्यकता है । मुझे कामना करनी चाहिए कि श्री

श्रोत्रिय अपने समय की माग को पूरा करते हुए कुछ और कुछ और निर्मम होगे ।

श्रोत्रिय जी के राजस्थान प्रवास मे इनकी रचनाओ को देखने का अवसर मिलता रहा है । पर तीन आयामो की कइ रचनाओ से एक साथ गुजरने का उन्होने स्नेहपूर्ण अवसर दिया इस कारण कह भी सका हूँ कि इन रचनाओ मे जहाँ सौन्दर्य की सूक्ष्मता को देखने की तीखी ललक है तो करुणा भी है ओर ऊर्जा से भरा आह्वान भी ।

शब्द के माध्यम से श्री श्रोत्रिय ने अन्तमन की यात्रा की हो प्रिय की कामना की हो उलाहने दिए हो या फिर अपने सामाजिक परिवेश को उकेरा हो– वे अपने को व्यक्त करने को विवश हुए हैं । यू वे शब्द सँजोने के प्रयास से दूर रहे है । इन रचनाओ के माध्यन से उन्हे सहज उद्वलन का रचनाकर्मी कहा जा सकता है ।

मुझे आशा करनी चाहिए कि आने वाले समय म इसी तरह के रचना रूपो मे भाषा–छन्द और राग का मोहक स्वरूप देखने को मिलता रहेगा । विलम्ब स सामन आ रहे इस काव्य प्रकाशन का पाठक ससार म अवश्य ही स्वागत हागा ।

हरीश भादानी

भूमिका



पद्मश्री ***डॉ० गोपाल दास 'नीरज',*** *डी० लिट (मानद)*
यशभारती रजतश्री भारतीतिलक
साहित्य–वाचस्पति टैगोर–वाचस्पति
विद्या–वाचस्पति गीत–सम्राट
गीत–गन्धर्व गीत–ऋषि राष्ट्र–गौरव।

गीत अनुभूतियो का मानसरोवर है । जिस प्रकार मानसरोवर के यात्रिक को समस्त अनावश्यक बोझ उतारकर निर्भार होकर यात्रा करनी पडती है उसी प्रकार गीत–पथ के पथिक को भी शब्दो और बुद्धि के अनावश्यक जाल–जजाल से मुक्त होना पडता है । कहने का तात्पय यह है कि गीत की कोमल अनुभूतियाँ व्यर्थ के शब्दाडम्बर दुरूहता और बौद्धिकता के दम्भ को वहन नही कर सकती । अनुभूति के मन्दिर मे आरती की पवित्रता और भक्ति की तन्मयता तथा सरलता लेकर ही प्रवेश किया जा सकता है और यह सहजता तथा तरलता जो गीत के प्राण तत्व हैं व्यक्तित्व की सहजता उपलब्ध हुए वगैर प्राप्त नही होते ।

गेयता भी गीत का एक प्रमुख तत्व है लेकिन यह सगीतात्मकता से भिन्न है । सगीत मे जहाँ स्वर और लय के सयोग से गेयता का जन्म होता है वहाँ गीत मे गेयता अक्षर–शब्द वातावरण तथा भावान्विति के माध्यम से अभिव्यक्त होती है । इसे गीत का अन्त सगीत भी कहा जा सकता है ।

आज चारो दिशाओ मे लय–युक्त कविता की मृत्यु की घोषणा की जा रही है । कहा जा रहा है कि आज गीत अप्रासगिक हो गया है और निकट भविष्य मे साहित्य के क्षेत्र से पूरी तरह खारिज हो जायेगा ।

सस्ती राजनीतिक गाली गलौज–युक्त कविता और हास्य–व्यग्य के नाम पर घुटुकुलेबाजी की लोकप्रियता देखकर लोगो मे यह धारणा और भी दृढ होती जा रही है । मेरे विचार से यह वक्तव्य उन लोगों का है जो या तो गीत लिखने मे स्वय को असमर्थ पाते हैं अथवा वह सवेदनशीलता जो गीत को परखने के लिए अनिवाय है उससे वे वचित हो गये हैं । यह सही है कि आज का युग बुद्धिवादी युग है । आज हर चीज को लाभ–हानि की तराजू पर रखकर तोला जाता है । फिर भी मेरी यह मान्यता है कि मनुष्य कितना ही बुद्धिवादी क्यो न हो जाये उसे कभी न कभी हृदय के पास जाना ही पडता है । गीत हृदय के रास्ते चलकर

सत्य शिव और सुन्दर को प्राप्त करने का माध्यम है । यद्यपि आज गीत का सृजन विरल हो गया है पर कुछ गीतकार उसकी ध्वजा को आज भी बड़े गौरव और गरिमा के साथ वहन कर रहे हैं । इन कतिपय गीतकारो के बीच जो एक नाम तेजी के साथ उभर कर सामने आ रहा है वह नाम है– 'गीताम्बरा-गीत –सग्रह के रचयिता श्री श्याम श्रोत्रिय' ।

गीताम्बरा गीत–सग्रह के तीन खण्ड हैं जो वस्तुत तीन पृथक–पृथक सग्रह हैं ।

(१) द्वार तुम्हारे

(२) मन आँगन मे और

(३) जाग–जाग भारती (त्रिविधा)

इनमे श्री श्रोत्रिय की सन् १ ५० से १९९७ तक की रचनाये सग्रहीत हैं।

(१) द्वार तुम्हारे

इस सग्रह मे ५२ गीत हैं जो हृदय की गहराइयो मे डूबकर मधुर अनुभूतियो का साकार करते है । कुछ गीत तो इतने ममस्पर्शी हैं कि हृदय आनन्द स अभिभूत हुए बिना नहीं रह पाता । इन गीतो मे कवि ने जीवन को उसकी समग्रता मे देखा परखा है लेकिन फिर भी उन सभी गीतो का केन्द्र बिन्दु प्रेम और सौन्दय ही है । कवि ने प्रेम की पीडा प्रिय मिलन की आकुलता और उसके बिछोह की व्याकुलता सभी को बडी मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त किया है । गीत के प्रमुख तत्व गेयता सक्षिप्तता वैयक्तिकता भावाकुलता मूल्यनिष्ठा आदि माने गये है। इन गीतो का तात्विक दृष्टि से विश्लेषण करे तो इनमे उक्त सभी तत्वो को सम्पूण प्रभविष्णुता के साथ विद्यमान पायेगे । इन गीतो मे सुन्दर शब्दयोजना नवीन बिम्ब और प्रतीक विधान के साथ–साथ भिन्न–भिन्न प्रकार की अनुभूतियो का मनहरण सयोजन है ।

निम्न पक्तियाँ इस कथन की पुष्टि करेगी –

प्राणों में है ज्योति तुम्हारी
शवलित अमित नेह की बाती
रूप–रग–रस के आँगन मे
प्रति पल–प्रतिक्षण शीश झुकाती।
जाने कब सजोग बनेगा

कब ये नौका लगे किनारे।
दीप–तुम्हारा द्वार तुम्हारे।।

(दीप तुम्हारा द्वार तुम्हारे)

देह–देह से विलग भले हो
चाहे कभी न वो मिल पायें
मन के बन्धन कभी न खुलते
एक बार यदि वो बँध जायें ।

(मेरी स्मृति के आँगन में)

आधी रात बरसती वेला
कैसा खेल मीत ये खेला
बाहर जल बादल बरसाते
भीतर नयन भिगोते जाते ।
फिर भी प्यास न बुझा पा रहे
बोलो तो तुम कब आओगे ।

(बोलो तो तुम कब आओगे)

झरे कामना–कुसुम दृगों से जीवन भीगा
किन्तु अधूरी ही वन्दन की रही मालिका।
श्वासो की जर्जर–नौका मँझधार पा गई
फिर भी छाया दूर तुम्हारी दूर किनारा ।

(तारो के उस पार बैठकर गाने वाले)

जनम–मरण का फेरा खाते
नश्वर–देह सजाते जाते।
पीर भरे पागल–प्राणों मे
कैसा प्यार समाया ।
ओ सपनों की छाया ।।

(ओ सपनो की छाया)

ऐसी क्या थी भूल कि तूने
गीतो का श्रृगार हर लिया।
शब्दों को वीरान बनाकर

जीने का अधिकार हर लिया।।

(ऐसा दर्द दिया है तूने)

स्वर्ण मैनें छुआ कोयला बन गया
रेशमी–रज्जु तो विष –भरा सर्प था।
रक्त–किशुक समझ पाँव मैंने धरा
ज्वाल–अगार –सा तप्त वह दर्प था।।

(मेरा मन अपराधी अपना)

लुट चुका रगीनियों का मस्त मेला
रूप–रस–स्वर–गन्ध का जो खेल खेला।
कारवाँ सब जा चुका अपने सफर पर
रह गया मन अब यहाँ बिल्कुल अकेला।।

(उस किनारे ले चलो माँझी मुझे)

किन्तु सुधियों की सुमिरनी के सहारे
चाह अपनी आस्था थामे हुए है ।
काश अन्तिम गीत तक भी चले आते
आँसुओं की पीर भी तुमने न जानी ।।

(फिर अधूरी रह गई अपनी कहानी)

आँगन की तुलसी भी गुमसुम
चुप है उस पर बिखरा–कुकुम
एकाकी हर कोना घर का
बुझा हुआ है दीपक तुम बिन।
कैसे मुक्ति मिलेगी जाने
व्यथा–भार से बोझिल जीवन।।

(मन की भाषा भूल गये तुम)

द्वार तुम्हार खण्ड के गीता का तीन श्रेणिया मे रखा जा सकता है–

(१) आराध्य के प्रति समर्पण के गीत– *यथा*–दीप तुम्हारा–द्वार तुम्हारे मेरा स्वप्न सत्य करदो हे ओ उदार ओ आराध्य ये जीवन दीपक की बाती आदि ।

(२) प्रेम और सौन्दर्य की अनुभूतियो के गीत– *यथा*– मेरी स्मृति के

आँगन मे मुझको स्वप्न तुम्हारे आते बोलो तो तुम कब आओगे अलि ये बन्धन टूट न जाय आ सपनो की छाया आदि ।

(३) जीवन चिन्तन के गीत– यथा– जिन्दगी आज तक सिर्फ वीरान है कैसा दुनियाँ का दस्तूर मुझको सौ–सौ बार छला रे मेरा मन अपराधी अपना मेरे लिये हृदय सर्वोपरि आदि ।

इन सभी गीतो मे भाषा की वह सहजता है जो गीतो को सम्प्रेषणीयता प्रदान करती है । यद्यपि भावानुरूप भाषा भाँति–भाँति के रूप धारण करती हे लेकिन वह सरलता का दामन नही छोडती । इन गीतो की यह एक उपलब्धि है जिसे रेखाकित किया जाना चाहिए ।

(२) मन आँगन मे–

यह खण्ड १०५ मुक्तको का सग्रह है । इनमे यादो के धागो मे पिरोइ गई मन की कोमल अनुभूतियॉ है जिन्हे हृदय–स्पर्शी इन्द्रधनुषी रगो से सजाया गया है। इस खण्ड को कवि ने यादो के नाम ही समर्पित किया है । अपने प्रिय को पाने की ललक उसे न पा सकने की पीडा का अहसास ओर व्याकुलता इन चतुष्पदियो मे अभिव्यक्त हुइ हे । यादो का दद इस खण्ड की रचनाओ का मूलस्वर है ।

गीतों में सचित करली है
आँसू की सौगात तुम्हारी
मन उपवन को सुरभित करती
अन्तरतम की बात तुम्हारी ।।

\+ + + + +

यादो से सुरभित है आँसू
इनका कोष अनन्त है
जनम–जनम से बहते आये
साक्षी काव्य–दिगन्त है ।

\+ + + + +

फूलों के बीच जब वह गुलाब खिलता है
मौसम ही बदल जाता पात–पात हिलता है।
यादो के दीप जब जलते मजारो पर
गीत जनम लेता है नया दर्द मिलता है ।।

अपन प्रिय को पाने की व्याकुलता इन पक्तियो म मुखर हो उठी है–

कितनी दूर निकल आया मैं
तुम्हे खोजता चलते–चलते।
मेरा दिन तो बीत चला है
थके नही तुम छलते–छलते ।।
छूट गये सब सगी साथी
छूट गयी महफिल की रुनझुन।
तुम बन गये स्वर्णमृग मेरे
भटक रहा हूँ मै तो बन–बन ।।
बिना तुम्हारे मेरा दीपक
बुझ जायेगा जलते–जलते ।।

ऑसू स्मृति की थाती है–यादो के दर्द की अभिव्यक्ति है–

जीवन के इस मुखर सत्य को कवि ने कितने सहज रूप मे व्यक्त किया है–

वाणी जब थक जायेगी आँसू से गीत लिखूँगा।
मिलन–विछोह भरे मन के सपनों से शब्द चुनूगा ।।
वाणी से जो कहा न जाये आँसू कह जाते हैं।
मन के और नयन के आँसू से गहरे नाते हैं।

अपने मन–मीत के प्रति आकुल–हदय की व्यथा कवि ने अन्तिम छन्द मे बडी मार्मिकता के साथ प्रकट की है–

कैसी दी है पीर मुझे ये बेसुध प्राण भटकते ।
दुनियाँ के दस्तूर मुझे क्यों बारम्बार हटकते ।।
बिना तुम्हारे व्यर्थ जिन्दगी पूजा या रस धारा।
बिना तुम्हारे गीतों की गगा का जल भी खारा ।।

(३) जाग–जाग भारती (विविधा)

यह गीताम्बरा का तीसरा खण्ड है । इसे कवि ने मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए प्राणो का उत्सग करने वाले शहीदो को समर्पित किया है ।

राष्ट्र भक्ति से प्राजल स्मृति–गीतों का यह हार।
तुम्हें समर्पित अमर शहीदो इसे करो स्वीकार।।

इस संग्रह म कुल ३५ गीत हैं । इसके साथ ही विविधा के अन्तगत २७ छन्द मुक्त रचनाय भी ह ।

इस खण्ड क गीता को निम्न शीषका मे रखा जा सकता है -

(१) उद्‌बोधनमय राष्ट्रीय गीत– यथा– नया दिनकर अपना देश कोटि–कोटि हम आज साथ हे देश के तरुण उठो जाग–जाग भारती सूरज हमे बुलाना होगा दीप हूँ माँ भारती की आरती का आदि।

(२) विविधगीत– यथा– ध्वज वन्दन मुक्ति–पव जय–गान प्रेमचन्द जयन्ती पर विष और अमृत नव वर्ष अभिनन्दन के गीत आदि।

(३) प्रकृति चित्रण के गीत– यथा– आगया बसन्त जा रही सन्ध्या गगन मे मूक शिशिर की रात अन्धेरी स्वागत हे ऋतुराज आदि ।

(४) छन्द मुक्त रचनायें– यथा– जनम जनम तक विवशता मैं गलत मोड मुड गया आँसू बलात्कार आदि।

इनमे जीवन चिन्तन परक व अनुभूतयथार्थ की रचनाये सम्मिलित हैं ।

श्री श्रोत्रिय यद्यपि व्रज प्रदेश के निवासी हैं किन्तु उनका कर्मक्षेत्र सम्पूण शिक्षा सेवा काल मे राजस्थान रहा है । वैसे उनका जन्म स्थान भी अजमेर राजस्थान है । व्रज प्रदेश की वष्णव–परम्परा और राजस्थान की शौय–परम्परा दोनो का प्रभाव इनकी रचनाओ मे झलकता है ।

निम्न गीतो की ओजस्विता दशनीय है–

भूख गरीबी बेकारी को श्रम से दूर भगाओ
देश–द्रोह जो करे नराधम सूली उसे चढाओ ।
दुश्मन घरके द्वार खडा हो उसको सबक सिखाओ
अर्जुन–भीम–भीष्म के वशज माँ की लाज बचाओ।
ये वीरों का देश मुक्ति–सन्देश है ये इससे प्यार हमको।
अपना देश है – इससे प्यार हमको ।।

(अपना देश)

तस्करो के गरल दन्त कील दो
देश–द्रोहियो के पंख छील दो
धर्म–जाति सम्प्रदाय–भाषा के
नाम पर जो देश को जला रहे

प्रगति तन्त्र की नवीन राह में
ध्वस शूल नाश के बिछा रहे।
उनका अब शीघ्र अवसान है ।
जननी जन्म–भूमि का आह्वान है ।।

(जननी जन्म भूमि का आह्वान है)

मृत्युजयी ओ प्रवीर !
बढ चलो रे विघ्न चीर
मुक्ति–दीप को सँवारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

(देश के तरुण उठो)

लिखी हुई संगीनों की नोकों पर अमर कहानी
दहक रही अब तक अंगारों में वह मस्त जवानी।
ला प्रणाम मेरा धरती को स्वर्ग बनाने वालो
हँसकर फाँसी के फन्दे को गले लगाने वालो ।।

(प्रणाम शहीदों का)

वीरों का यह देश हमारा बाना केसरिया है
जौहर की लपटों में ही अपना सिन्दूर जिया है।
सैनाणी का तप्त–रक्त अब तक सन्देश सुनाता
तरुणाई को धरती माँ के ऋण की याद दिलाता ।।

(अपना देश महान साथियो)

रक्त की हर बूँद पर है
सर्वदा अधिकार माँ का।
आँख उसकी खींच लूँगा
इस तरफ यदि शत्रु झाँका।।
राष्ट्र रक्षा के लिये है
भीष्मवत यह शपथ मेरी।
प्राण यदि देने पडे
तैयार हूँ, पल की न देरी ।।

(दीप हूँ माँ भारती की आरती का)

अब भी जाग नही तुम पाये
तन की आग न दहका पाये।
मान देश का मिट जायेगा
यहाँ लोकमत बिक जायेगा ।।
गिरवी फिर रख देगे दुश्मन
सोने का यह देश हमारा
फिर स्वदेश की पावन माटी ने-
क्रन्दन कर तुम्हे पुकारा ।।

(जागो मेरे तरुण साथियो)

भारतीय प्रकृति जो विविध रूपा की एक नाट्य शाला हे सदैव से कवियो को ही नही सम्पूर्ण मानव जाति को आकर्षित् करती रही है । ग्रीष्म वषा शरद हेमन्त शिशिर और बसन्त आदि प्रकृति क जितने रूप यहाँ देखने को मिलत हैं अन्यत्र दुलभ हैं ।

यहाँ यदि भीषण गर्मी पडती है तो कडाके की ठण्ड भी देखने को मिलती है । यहाँ घनघोर वषा की झडी लगती है तो मरुस्थल का सूखा भी अपनी प्रचण्डता दिखाने से नही चूकता । शकर के रोद्र और शिव रूप ताण्डव और लास्य देखने को मिलते हैं।

कौन कवि है जो प्रकृति क इन रूपो को दखकर विमुग्ध नही होता । गीताम्बरा के कवि श्री श्याम श्रोत्रिय भी प्रकृति के जादू से बच नहीं सके ह। कही कही उनका मन पूरी तरह इसमे रमा हे ओर प्रकृति सम्पूण सौन्दर्य के साथ उनके शब्दो के माध्यम से कागज पर उतर आइ है ।

निम्न उद्धरण इस कथन के समथन मे प्रस्तुत है-

गा रहा विहग-बाल डाल पर प्रवीण राग
झूमती लुटा रही है गीत ये लता-प्रवाल।
स्वर्ण धूलि सी बिखेरता है विहँसता अनन्त
पुलक भर पुकारती पवन कि आ गया बसन्त।।

(आ गया बसन्त)

ये शिशिर का अन्त है अलि
जाग-जाग बसन्त है कलि

ढप बजाते दूर गाते
दिवस के विश्रान्त जन हैं।
जा रही सन्ध्या गगन में ।।

(जा रही सध्या गगन मे)

मूक शिशिर की रात अधेरी।
श्वान भूँकते निर्जन मग में
व्यथित जागते केवल जग में
वात–त्रसित पत्तों के स्वर सुन
व्यथा जागती मन की मेरी ।

(मूक शिशिर की रात अँधेरी)

महक उठे डाल–डाल जल–पूरित ताल–ताल
स्वण बालियो से भरें खेतों के थाल–थाल।
हर आँगन बरस उठे खुशियों के सावन ।।

(नवल वर्ष का अभिनन्दन)

इसी प्रभाग मे सम्मिलित छन्द–मुक्त रचनाओ मे भी एक स्वर एक लय ध्वनित है । कोई न कोई सन्देश रचनाओ के माध्यम से दिया गया है जिसे पहचान कर मन आहलादित हो जाता है । निम्न उद्धरण इस कथन की पुष्टि करेंगे–

कितनी देर हो गई
घुप्प अँधेरा है ।
बिजली अब नही आयेगी
पानी भी नही आयेगा ।
किसको कहें
कौन सुनेगा ?
रोज का किस्सा है ।
धीरे–धीरे ऐसे ही
जीवन बीत जायेगा ।

(बीतता जीवन)

मेरे हदय मे अक्सर एक शूल चुभता रहता है ।
यह चुभन भी सुखदायी है–
याद दिला जाती है
वह मेरा जो सचमुच था नही मेरा ।

(एक शूल)

बलात्कार पशुता है– शारीरिक दस्युता है
इच्छाओ का बलात्कार कम पशुता नही ।
दूसरो की इच्छाओं– आकाक्षाओ को अपने अनुरूप बनाना
यह भी बलात्कार है– इच्छाओं का बलात्कार ।

(बलात्कार)

रास्ते के लोग सब मुड गये हैं
रास्ता लुभावना है।
कदम भी बढ रहे हैं
काश एक कोई तो साथ होता ।

(काश)

अन्त मे मैं कहना चाहूँगा कि 'गीताम्बरा' गीतो और मुक्तकों का एक श्रेष्ठ सग्रह है जो काव्य–प्रेमियो तथा समालोचको के बीच में खूब–खूब प्यार और आदर पायेगा । इत्यलम् ।

जनकपुरी मैरिस रोड
अलीगढ – 202 001
दूरभाष 402605

अपनी बात



काव्य के माध्यम से मन की बात अभिव्यक्त करना सम्भवत मुझ अपनी वश परम्परा से मिला । मेरे प्रपितामह पडित व्रजवल्लभदेव श्रोत्रिय 'वल्लभसखा अपने समय के सुपरिचित व्रजभाषा कवि थ । (व्रज का इतिहास -- श्रीकृष्णदत्त वाजपेयी पृष्ठ सख्या ३७२ एव व्रज साहित्य का इतिहास -- डॉ० सत्येन्द्र पृष्ठ सख्या ७३६)

पितामह पडित रामगोपाल श्रोत्रिय 'गुपाल कवि की सान्ध्य गाष्ठिया म रसिकजना के बीच प्रतिदिन नवसृजित छन्द सुनाये जाते थे । ऐसे माहौल म बचपन से ही तुकबन्दी करने की अभिरुचि पनपने लगी । हाइस्कूल तक पहुँचते--पहुँचते 'समस्या पूर्ति' का भी अभ्यास होने लगा । नियमित अध्ययन के साथ १९४९ मे 'साहित्य विशारद और १९५१ मे 'साहित्य रत्न' (हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग) की परीक्षाय उत्तीण करन के क्रम म हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाआ क अध्ययन--मनन का अवसर मिला । इसी पृष्ठभूमि ने साहित्य--सृजन की भावभूमि प्रदान की । मैने १९५५ मे एम०ए० हिन्दी साहित्य (आगरा विश्वविद्यालय स) और पुन १९५७ मे एम० ए० हिन्दी साहित्य (राजस्थान विश्वविद्यालय से) उत्तीर्ण किया । अत हिन्दी साहित्य का गहन अध्ययन करने का सौभाग्य निरन्तर मिलता रहा तथा साहित्य--सृजन भी आरम्भ हो गया ।

श्री चम्पा अग्रवाल इन्टर कालेज मथुरा मे छठी कक्षा से इन्टर साइन्स तक अध्ययन करने के बीच मुझ 'सत्यन्द्र जी* रो शिक्षा प्राप्त करन का अवसर मिला । उनके साहित्यसर्जक व्यक्तित्व ने मुझ प्रेरणा प्रदान की । १९५२ मे मैंने बलवन्त राजपूत कालेज आगरा स बी० एस--सी (जीव विज्ञान) की परीक्षा उत्तीण की । इस काल मे गुरुवर सत्येन्द्र जी रो सम्पर्क बना रहा (वे जैन इन्टर

* डॉ० सत्येन्द्र एम० ए० पी० एच--डी डी० लिट
पूव अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर ।

कालेज आगरा म प्राचाय थे) १६६७ म पी-एच० डी० करने हेतु मैंने उन्ही के दिशा निर्देश मे कार्य आरम्भ किया जो दुर्भाग्यवश पूर्ण नही हो सका– असमय मे ही सत्येन्द्र जी का स्वर्गवास हो गया । उस समय वे राजस्थान विश्व विद्यालय मे हिन्दी विभागाध्यक्ष थे और मैं राजस्थान मे ही राजकीय शिक्षक था । इस समय तक राजस्थान शिक्षा विभाग के प्रकाशनो मे तथा अन्य पत्र–पत्रिकाओ मे मेरी विभिन्न विधाओ की रचनाये प्रकाशित हो चुकीं थी जिनसे काफी प्रोत्साहन मिला ।

आगरा मे अध्ययन के वष मरे साहित्यसृजन के लिय विशेष रूप से प्रेरणादायक रहे ।

शिक्षा सत्र १६५०–५१ मे बी० आर० कालेज की एक साहित्यगोष्ठी मे मैंने प्रथम बार अपनी काव्य रचना पढी तो मुझे प्रशसा भी मिली और पुरस्कार भी । उस समय डॉ० नरेन्द्रदेव शास्त्री हिन्दी–सस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे । उनका आशीर्वाद मुझे मिला– विशेष रूप से इसलिए कि विज्ञान का विद्यार्थी होते हुए भी मैं हिन्दी साहित्य के मौलिक सृजन के लिए उन्मुख हो रहा था । १६५१ मे जब हर वर्ष की भॉति कालेज प्रागण मे कवि सम्मेलन का आयोजन हुआ तो प्रथम बार कविवर नीरज और श्री वीरेन्द्र मिश्र के साथ काव्य पाठ करने का अवसर मिला । श्री नीरज अपने काव्यपाठ की विशिष्ट शैली और भावप्रवणता के कारण काव्य मच पर छा गये थे । उनके गीतो ने मेरी काव्य रचनाओ को इतना प्रभावित किया कि बाद मे रचित मेरे गीतो को सुनकर प्रशसक मुझे 'लाडनू का नीरज कहने लगे (लाडनूँ–नागौर राजस्थान सेवास्थल होने से सम्पूर्ण शैक्षिक काल मे मेरी साहित्य–साधना का तप स्थल रहा)

१६५१ मे ही कालेज मे प्रेम चन्द जयन्ती पर मैंने काव्य पाठ किया तो आदरणीय डॉ० रामविलास शर्मा ने मुझे स्वय पुरस्कृत किया था । सेन्ट जॉन्स कालेज आगरा मे आयोजित प्रतियोगिता मे मुझे विशेष रूप से पुरस्कृत किया गया । इसी वर्ष प्रगतिशील लेखक सघ ने अखिल भारतीय स्तर पर आयोजित कहानी प्रतियोगिता मे मेरी कहानी **'वह कौन थी'** को पुरस्कृत किया जिसका वाचन

श्रद्धेय डॉ० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' ने किया था । श्रीयुत राजेन्द्र यादव से भी इन्हीं दिनो मेरा परिचय हुआ । उन्होने पुरस्कृत कहानी की समीक्षा 'हंस' मे छापी । मेरा परिचय क्षेत्र बढा और साहित्यसर्जको से विचार–विमर्श करने तथा काव्य गोष्ठियो म सम्मिलित होने के अवसर मिलने लगे । किन्तु १९५२ मे राजस्थान मे शिक्षा–सेवा मे नियुक्त हो जाने के कारण आगरा के साहित्यिक वातावरण से मेरा सम्पर्क टूट गया ।

मथुरा (पैतृक निवास) मे श्री पोद्दार हायर सैकण्डरी स्कूल म प्रति वर्ष कवि सम्मेलन आयोजित होता था । वही १९५४ व १९५५ म दो बार आदरणीय श्रीयुत नीरज के साथ काव्य पाठ करने का अवसर फिर मिला ।

सेवा स्थान लाडनूँ मे प्रवास काल मे सुजानगढ जसवन्तगढ छापर डीडवाना नागौर आदि स्थानो पर आयोजित काव्यगोष्ठियों मे भाग लेने क अवसर मिलत रहे । अजमेर जयपुर (रवीन्द्र मच पर १९८२) मे और जोधपुर म आयोजित कवि सम्मलनो म भाग लेने का भी सौभाग्य मिला जा विशेष प्रोत्साहन दायक रहा ।

शिक्षा विभाग राजस्थान बीकानेर द्वारा प्रतिवर्ष प्रकाशित सृजनशील शिक्षको के रचना सगहो मे रचनाएँ सम्मिलित हुइ । १९६७ से १९७१ तक के लगभग सभी प्रकाशनो ('परिक्षेप 'प्रस्तुति' प्रस्थिति 'सन्निवेश 'कैसे भूलू यदि गान्धी शिक्षक होते') मे रचनाओ को स्थान मिला । १९८५ मे 'मरुअचल के फूल मे गद्यगीत रचना प्रकाशित हुई । लगभग इसी काल मे जबलपुर मध्यप्रदेश की साहित्यिक सस्थाओ के प्रकाशनो – 'स्वर गुजन 'जय इन्दिरा' 'हृदय–हृदय के गीत' 'गीत–सौरभ' 'गूँजे अनगूजे स्वर' 'वीणा के स्वर' आदि मे गीत प्रकाशित हुए । इसके साथ ही स्थानीय व प्रादेशिक पत्र–पत्रिकाओ मे रचनाएँ प्रकाशित होती रहीं ।

शिक्षा विभागीय प्रकाशन परिक्षेप–१९६७ म प्रकाशित गद्यगीतात्मक निबन्ध 'उर्वरा है मरुधरा – सग्रह का सर्वश्रेष्ठ निबन्ध माना गया जिसने सृजन प्रकिया को विशेष प्रेरणा दी ।

आकाशवाणी जाधपुर मे अनेक वर्षो तक काव्य पाठ करने व काव्य गोष्ठियाँ सचालित करने का अवसर मिला । मथुरा निवास म अब आकाशवाणी मथुरा से साहित्यिक वार्ताओ और काव्यपाठ का अवसर मिलता रहता है ।

'गीताम्बरा मेरे तीन काव्य–सग्रहो – 'द्वार तुम्हारे 'मन आँगन मे और 'जाग–जाग भारती का समवेत प्रकाशन है । इसमे मेरी काव्य–यात्रा के वर्ष १९५० से १९९७ तक के गीत सम्मिलित हैं ।

साहित्य–जगत मे अक्षय कीर्तिमान स्थापित करने वाले उन सभी श्रद्धेय जनो के प्रति मैं हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनकी प्रोत्साहन भरी सम्मतियाँ 'गीताम्बरा को प्राप्त हुई । श्रद्धेय डॉ० शिव मगल सिह जी 'सुमन के प्रति मैं विशेषरूप से आभारी हूँ जिनके सुझावो से म उपकृत हुआ हूँ । आदरणीय डॉ० कुँवर बेचैन डॉ० तारा प्रकाश जोशी और श्रीयुत हरीश भादानी जी की सम्मतियो के लिए म हृदय से कृतज्ञ हूँ ।

श्रीयुत दिनकर मेरे राष्ट्रीय गीतो के और कविवर श्रीयुत 'नीरज' मेरे हृदयगीतो के आदर्श रहे हैं ।

'गीताम्बरा की भूमिका लिखने के लिए मैं नीरज जी के प्रति श्रद्धावनत हूँ – अनुगृहीत हूँ ।

राजस्थान के शिरोमणि शिक्षाशास्त्री साहित्यकार गुरुवर डॉ० जवरनाथ जी पुरोहित की इस प्रकाशन के लिए प्रारम्भिक प्रेरणा रही है । मैं उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ ।

प्रस्तुत गीतसग्रह के प्रकाशन ओर उसे गरिमामय स्वरूप प्रदान करने मे मिले अमूल्य मार्गदर्शन हेतु मैं प्रख्यात साहित्यकार–पत्रकार श्री मोहन स्वरूप जी भाटिया के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ ।

काव्य–मर्मज्ञ और गीत–रसज्ञो के अन्तर्लोक का यदि स्पर्श कर सके तो इन गीतो का सृजन सार्थक होगा ।

द्वार-तुम्हारे

तुम्हारे लिए

ये गीत समर्पित हैं – द्वार तुम्हारे !
गीतो की गहराइया में डूबने वालों को तुम्हारा परिचय कैसे दूँ ?
तुम्हें पाने के लिए कितने जन्म बिताये हैं मैंने ।
हर सौन्दर्य–मूर्ति में मुझे तुम्हारा प्रतिविम्ब दीख पडा है ।
मिलन और विछोह के विह्वल–भुजपाश में तुम्हें बाँध लेने का मैंने बार–बार प्रयास किया है ।
जब से होश सँभाला तुम्हें अपने हृदय–दर्पण मे झाँकते हुए पाया ।
किशोरावस्था की गलियाँ पार करके तरुणाई के आँगन मे पहुँचते–पहुँचते तुमने मेरे मन–प्राणों को बार–बार झकझोरा है ।
कैसे बताऊ कि तुम कौन हो !
काली और उजली रातो के एकान्त में मुझे ऐसा लगता रहा कि तुम मेरे बहुत करीब हो ।
अलसाये भोर और थकी हुई सन्ध्या में मुझे तुम्हारी उपस्थिति का आभास मिला है ।
विभिन्न रूपों और विभिन्न मन स्थितियों में मैंने गीतों की पगडडियों पर चलकर तुम्हें ढूँढने का प्रयास किया है ।
जहाँ जिस रूप में तुम्हें हृदय के समीप पाया मैंने तुम्हारी अर्चना में गीतों के दीप जलाये भावो के पुष्प चढाये और अव्यक्त अश्रु–मुक्ताओं के हार पहनाकर तुम्हें अभिषिक्त किया ।
कभी मन गा उठा– अलि ये बन्धन टूट न जाये' और तन्मय होकर थिरक उठा – 'तुम आये मेरे गीत मुखर हो पाये ।
सपनों में आकर मन की पीडा को जगाने वाली तुम्हारी छाया–मूर्ति से मैंने कहा – ओ सपनों की छाया –रजनी के पखों पर आना सोये मन की पीर जगाना किसने तुम्हें सिखाया ।

जब तुम्हारे अभाव को अन्तरतम में अनुभव किया तो मैं गुनगुना उठा – 'याद तुम्हे भी आती होगी ।
एकाकी मन की असह्य स्थिति में मैं कह उठा – 'ऐसा दर्द दिया है तूने जनम–जनम तक पीर न जाये ।
इस दर्द को भुलाने के लिए कभी मेरे मन ने प्रकृति का आँचल पकडा और गाया–

–'जा रही सन्ध्या गगन मे 'तो कभी पखुरियो की रगभरी कोमलता से तादात्म्य स्थापित कर कहा – 'कली खिली लजा उठी अधीर पीर गा उठी ।
तुम्हारे विछोह की पीडा तो मैं जन्म जन्मान्तर से झेलता आया हूँ ।
पीर–नहाये और दर्द–सँवारे ये क्षण जीवन म मुझे सबसे प्यारे लगे हैं ।
इन बेसुध अनमोल क्षणो में मैंने तुम्हे अपने सबसे निकट पाया है– एकात्म–एकाकार ।
तुम हर–पल हर–क्षण मेरे प्राणो म समाये हो । तुमसे पृथक तुमसे अलग मेरा कोई अस्तित्व नही है ।
'द्वार तुम्हारे–समर्पित हैं ये गीत ।



द्वार तुम्हारे

● श्याम श्रोत्रिय

दीप तुम्हारा द्वार तुम्हारे

जनम-जनम में आश-सँजोये,
दीप-तुम्हारा, द्वार-तुम्हारे ।

प्राणों में है ज्योति तुम्हारी
शवलित अमित नेह की बाती,
रूप-रंग-रस के आँगन में
प्रतिपल-प्रतिक्षण शीश झुकाती ।
जाने कब संजोग बनेगा,
कब ये नौका लगे किनारे ॥
दीप-तुम्हारा, द्वार-तुम्हारे ॥

इसे शरण में आ जाने दो
किरणराजि बिखरा जाने दो,
युग-युग से ये रहा प्रतीक्षित
अब तो चरण-धूलि पाने दो ।
साँझ-ढले, अँधियारा-छाये,
व्यथित हुआ ये बिना सहारे ॥
दीप-तुम्हारा, द्वार-तुम्हारे ॥

दीप अकिंचन मेरे मन का
राही साान्ध्य-भोर-वन्दन का,
पथ-जोहता रहा अहर्निश
तेरे दरस-परस चन्दन का ।
इसे शरण लेकर अपना लो,
स्वप्न सफल हो जाये सारे ।।
दीप-तुम्हारा, द्वार-तुम्हारे ।।

यदि दीपक प्रवेश वर्जित है
एक किरण ही आ जाने दो,
अपने मन्दिर मे प्रिय केवल
एक किरण-कण ही छाने दो ।
एक मधुर-स्पर्श भर मिले,
श्वाँस-श्वाँस बस यही पुकारे ।।
दीप-तुम्हारा, द्वार-तुम्हारे ।।

1997

नयन-दीप में नेह भरा है
अन्तर में प्रतिबिम्ब तुम्हारा ।
गीतों में बहती रहती है
सुभग तुम्हारी ही रस धारा ।।

मेरा स्वप्न सत्य करदो हे !

मेरा स्वप्न सत्य कर दो हे ।
युग-युग तक कर सकू अर्चना
प्राणो मे अमृत-भर दो हे ।

ज्योति-रूप का वन्दन युग से
विकल शलभ करता आया है,
दर्द-भरे प्राणो से गीत
अधीर पपीहे ने गाया है ।
किरणो के पग छू चकोर ने भी
अपना पथ पहचाना है,
स्वर मोहित होकर कुरग ने
छोड दिया अपना दाना है ॥

तुममे एकाकार हो सकूँ,
मुझको भी ऐसा वर दो हे ।
मेरा स्वप्न सत्य कर दो हे ॥

क्षणभर मीन न प्राण धर सके
अपने प्रभु से दूर बनी रह,
जनम-जनम से साध पुजाने पर
भी तो मजबूर बनी है ।
दर्द पपीहे का, चकोर का सा-
-भोलापन, अब बरसाओ,

प्राणों को दूरागत स्वर से
मत कुरंग-सा अब तरसाओ !

मन वीणा के तारों पर तुम,
अब तो मृदुल-परस भर दो हे !
मेरा स्वप्न सत्य कर दो हे !!

1962

हे असीम, दिग्भ्रमित मनुज को पथ दिखलाओ ।
पीड़ित जन-मन की दुखदायी पीर मिटाओ ।।
हिंसा की भीषण ज्वाला से जगत जल रहा ।
व्यथा भार हरलो करुणा का जल बरसाओ ।।
हे अनन्त जग भर को भर दो फिर ममता से ।
धरती हो खुशहाल विश्वमानव-समता से ।।

ओ उदार !

मौन प्राण की पुकार
जिन्दगी के आर-पार,
है भटक रही-
तलाशती तुम्हारा द्वार,
ओ उदार !

स्वप्न में तुम्हीं सदा बसे हुए,
शेष राग-रंग सब तजे हुए ।
बोलते तुम्हीं श्रृंगार उम्र के,
तार सांस-सांस के बजे हुए ।

मीत, इसे लो दुलार एक बार,
है भटक रही, तलाशती तुम्हारा द्वार ।
ओ उदार !

आश का सहास दीप जल रहा,
नेह का प्रकाश पुञ्ज पल रहा ।
आँख मे थिरक-थिरक उठा कभी,
चाह का प्रवाह भी मचल रहा ।।

प्राण इसे लो दुलार एक बार,
है भटक रही, तलाशती तुम्हारा द्वार ।
ओ उदार !

देवता, तुम्हीं प्रवाह प्रीति के,
रागमय सुहाग राग रीति के ।
उम्र खूब दर्द में डुबो-डुबो
ओठ पर सहेज भेज गीत रे ॥

कह रही है, बह रही है अश्रुधार,
है भटक रही, तलाशती तुम्हारा द्वार ।
ओ उदार ।

तुम मिलो कि मिल सके जहाँ मुझे,
तुम खिलो मिले हँसी वहाँ मुझे ।
तुम चरण-धरो, चहक उठे चमन,
तुम मिलो चिराग जल उठे बुझे ॥

तुम मिलो महक-महक उठे बहार,
है भटक रही तलाशती तुम्हारा द्वार ।
ओ उदार ।

मेरी जिन्दगी तुम्हीं सदा रहे,
मेरी बन्दगी तुम्हीं सदा रहे ।
'अर्चना के गीत का प्रवाह तुम'
प्राण की पुकार गूँजती बहे ॥

गूँजती रहे ये प्राण की पुकार,
है भटक रही, तलाशती तुम्हारा द्वार ।
ओ उदार ।

गीत हो तुम्हीं शृंगार गीत के,
प्रेरणा-प्रवाह प्राण-प्रीति के ।
बाँधकर गुलाब-गंधपाश में
उम्र को सँवार दो प्रतीति से ।।

जन्म हो सफल मुझे मिले कगार !
है भटक रही, तलाशती तुम्हारा द्वार,
ओ उदार !

1966

नयन झलक पाने को बहुत-बहुत आकुल हैं ।
श्रवण शब्द सुनने को बहुत-बहुत व्याकुल हैं ।।
हृदय है अधीर गिनता प्रतीक्षा के पल ।
काश तुम मिल जाते होता जन्म भी सफल ।।

ओ ! आराध्य

स्नेह-स्पर्श में बाँधो मेरे !
जीवन बिखर गया रे, मेरा !!

अश्रु-नीर गंगा जल करदो,
रीती दृष्टि स्वर्ण से भरदो !
हरदो तन का शाप, सरल तुम मेरे !
महके मृदुल बसेरा !!

स्नेह-स्पर्श में बाँधो मेरे !
जीवन बिखर गया रे, मेरा !!

व्यथित श्वाँस से मलय मिलाओ,
म्लान-अधर पर हास-खिलाओ !
आओ करदो स्वप्न सुखद, तुम मेरे !
चहके साँझ सवेरा !!

स्नेह-स्पर्श में बाँधो मेरे !
जीवन बिखर गया रे, मेरा !!

प्राण-दीप को स्नेह-दान दो,
रुँधे-कंठ को मधुर गान दो !
दो अतीत फिर रूप-सुभग, तुम मेरे !
हो प्रणीत का फेरा !!

स्नेह-स्पर्श में बाँधो मेरे !
जीवन बिखर गया रे मेरा !!

1968

मेरी स्मृति के आँगन में

मेरी स्मृति के आँगन में
आज उतर आये दो पंछी ।

बहुत दिनों के बाद सलौने
लौटे हैं सपने सच बनके,
यादों की खुशबू ने छूकर
मुँदे-द्वार खोले हैं मन के ।

बरसाती रिमझिम के नीचे
गीतों के जो हार पिरोये,
दरस-परस भीगे मौसम के
सिमट गये हैं दिन जो खोये ।

तारों-भरी अँधेरी छत पर
बुने हुए वे ताने-बाने,
लिपट गये हैं उच्छ्वासों से
फिर वे स्वर जाने पहचाने ।

कहाँ गई वह डाल छाँह की
जहाँ नीड धरने का मन था,
बिखर गये आशा के तिनके
उजडा जो मन का मधुवन था ।

बिछुड गये थे जो जीवन में
साथी वे बन गये सपन के,
जब यादो का मौसम आता
वे भी आते पाहुन बनके ।

देह-देह से विलग भले हों
चाहे कभी न वो मिल पायें,
मन के बन्धन कभी न खुलते
एक बार यदि वे बँध जाये ।

ये बन्धन हैं बहुत सलौने
सम्बल एकाकी जीवन के,
सजे सदा रहते हैं इनसे
मेरे अन्तरतम के कोने ।

मेरे मन के वृन्दावन मैं
फिर गूँजी कान्हा की वशी,
मेरी स्मृति के आँगन मे
आज उतर आये दो पछी ।

1950



ओ मीत न जा, सूना कर

कुछ भाव जगे हैं मन मे
तेरी स्मृति-सज्जा के,
हिम-बिन्दु गिरा कर उनपर
ओ मीत न जा सूना कर ।

रह-रहकर याद उठेगी
बनकर बरसात हृदय मे,
आँखो से नीर बहा कर
ओ मीत न जा सूना कर ॥

कुछ कली लगी हैं सुन्दर
कुछ दिन मे फूल खिलेंगे,
खिलने से पहले ही रे
तुम जाते उन्हे गिरा कर ।

जीवन कितना दुष्कर है
यह भान होरहा है अब,
सबको सम्पूर्ण सफर-भर
मिलता है साथ यहाँ कब ॥

हमसे तुम दूर चले हो
औ' शायद जीवन भर को,
क्या बिछुडे कभी मिलेगे
मिल भी क्या कभी सकेंगे ।

हैं अमर बन गईं यादें
हँसने रोने की बातें,
रह-रहकर कलपायेंगी
अब सावन की बरसातें ॥

बादल घिर-घिर कर आते
रिमझिम-सगीत सुनाते,
आँगन के बीच खड़े हम
तन को मन को नहलाते ।

दूरागत वंशी की धुन
मन-प्राणों को छू जातीं
तब हरे नीम की डालें
पीपल पर झुक-झुक जातीं ॥

तारों का लुक-छिप जाना
फिर चन्दा का मुस्काना,
सबसे ऊपर की छत पर
गीतों का जश्न मनाना ।

भीगी-सी मस्त पवन का
मन को तन को छू जाना,
किरणों के रजत कणों को
हम पर फिर-फिर बरसाना ॥

सर्दी बर्फीला मौसम
कम्बल की मृदु गरमाहट,
बाहर की ठंडी सनसन
अनजानी सी घबराहट ।

झोको का दीप बुझाना
फिर-फिर से उसे जलाना,
कैसे भूला जायेगा
वह गुजरा हुआ जमाना ॥

कुछ दिवस बीत जायेगे
फिर तुम तो सभी भुलाकर
ना याद करोगे ये दिन
इक दुनियाँ नई बसा कर ।

मेरी स्मृति-प्रतिमा का
तुम क्या जानो क्या होगा,
आँसू से पूजा होगी
नयनो के दीप जला कर ॥

इन आँखो की छाया मे
जब-जब तुम आ जाओगे,
कर लिया करूंगा स्वागत
मैं तुमको मन मे पाकर ।

चुप चुप वे भोली आखे
छिप-छिप कर शरमा जाना,
मै कैसे भूल सकूंगा
वह नजरों का मुस्काना ॥

जाना ही है तो जाओ
है एक यही अभिलाषा,
तन-मन से सुखी रहो तुम
हो पूर्ण तुम्हारी आशा ।

बीते उन अमर क्षणों की
स्मृतियाँ छाईं मन पर
गहरी-सी छाप लगा कर
तुम जाते हो जीवन पर ॥

कितना उपकार तुम्हारा
बस एक बार मुस्काकर
विश्वास दिलाते जाओ
ना भूलोगे जीवन-भर ।

पर कसम दिलाकर कहता
कोई वह मन में आकर,
मै याद करूंगा तुमको
रह रहकर रोकर गाकर ॥

मन बार-बार कहता है
मैं हारगया समझा कर,
'आँसू बरसात बना कर
ओ मीत न जा सूना कर' ॥

1951

बुझे दीप जल जाते यदि तुम मिल जाते ।
मुरझाये मन के सपने सब खिल जाते ॥

मैं क्या करुं

शमा के जलते पख अजान
बरसते नयनो से वरदान,
मधुर मिटने की भोली साध
अग्निमय किरणो का परिधान !

ज्योति के चरणो पर रोया
तभी धीरे से परवाना,
अरे मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ !!

तरल उच्छ्वासो के बादल
कल्पना के भीगे आँचल,
नील-नभ मे उडते जाना
अरे मेरा सूखा स्थल !

बहाये ले जाओ आँसू
वहाँ धीरे से बरसाना,
अरे मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ !!

गीत-गगा के नीर विकल
अधीरे, धीरे-धीरे चल,
स्वप्न-सागर की लहरो ने
सुलाये हैं अपने आँचल !

सुनो रे ओ भोले जीवन
मिलन के पथपर मिट जाना ।
अरे मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ ॥

सजल तारों के गीले गान
विगत स्मृति का अनुसन्धान,
जगाये अलसाये सपने
मिटाने को क्यों भोले प्राण ।

मिलन पर भूल गये साथी
विदा के क्षण अब पहचाना ।
अरे मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ-मैं क्या करूँ ॥

1951

तुम्हारी याद में जगते-नयन सब रात जाती है
सुनाती भीगती सरगम चली बरसात जाती है ।
शलभ जलता दिया जलता न कोई एक रुक पाता
रुके कैसे रुके तो प्यार की सब बात जाती है ॥

अरी मन की मधु जलधि तरंग

अरी, मन की मधु जलधि तरग ।
जारहीं क्या जीवन के पार
छिपाये अन्तर मे ससार,
वेदना का यह भीषण ज्वार
न जाने क्या लायेगा रग ।
अरी, मन की मधु जलधि तरग ।

बिछाये मैंने गीले गान
आज स्मृति का फिर अभियान,
बहाये ले जा ये वरदान
अरी बन जा आँसू की गग ।
अरी, मन की मधु जलधि तरग ।।

हृदय का धूमिल पारावार
चेतना डूब रही मँझधार,
बरस कर मधुपीडा का भार
न जाने क्यो करता है तग ।
अरी, मन की मधु जलधि तरग ।।

दूर है दूर, नया ससार
भुला मत देना विगत दुलार
मौन है गीतो का श्रृगार
अश्रु–अलसित हैं मेरे अग ।
अरी, मन की मधु जलधि तरग ।।

1951

बहा जा रहा जमुना जल

बहा जा रहा जमुना जल ।
दूर क्षितिज पर घिरा घना वह नीलम का बादल ॥
पुष्प मालिका, शुष्क पत्र
लहरों पर द्रुतगति,
दीपक जलता एक
एक बस – दूर क्षितिज पर
छाया गहन तिमिर !
ताड वृक्ष और झुरमुट सघन द्रुमोयुत
प्रतिबिम्बित उर्मिल पट,
करते छाया – अवलोकन
और ये नौका चल दी दूर
कगारे छोड,
काटकर लहरों के दल ।
ऊपर जलदाकाश गिराता हर्ष बिन्दुकण,
नीचे भँवर सहास
दौडती जाती सत्वर !
धन्य-धन्य जमुना-जमुना जल
सध्या दर्शन
मैं बैठा इस पार एक प्रस्तर गुम्बज पर,
पाञ्चजन्य-घटिका-झाँझ-ध्वनि चली आ रही,
धीरे-धीरे
निकट भव्य भगवान
निकट मन्दिर मनभावन ।
बहा जारहा जमुना जल ॥

1952

मेरा अन्तिम हास

कितने ज्योतिर्बिन्दु इन्दु-स्नेह-प्रज्वलित
मानस की लहरो मे मैंने डाले सस्मित,
जीवन की उर्मिल आशा मे उठ-उठ गिर-गिर
सघन तिमिर की शुष्क श्वाँस से पाया विगलित ।
मेरा अन्तप्रयास नहीं क्या यह दीपक भी जल पायेगा ।
मेरा अन्तिम हास अरे क्या यह दीपक भी बुझ जायेगा ।।

मेरा अश्रुस्नेह-भरा यह भोला दीपक
मेरा तट ये छोड चला उस पार दूर तक,
जहाँ स्वप्न के बादल काले बनते जाते
एकाकी वह भी मैं भी बढते हैं थक-थक ।
दोनो राही व्यस्त अरे क्या पथ नहीं चिर मिल पायेगा ।
मेरा अनुपम हास अरे क्या यह दीपक भी बुझ जायेगा ।।

अन्धकार इस पार उधर भी सघन अँधेरा
दीपक मेरा दूर और भी दूर बसेरा,
डगमग बढता दीपक लौ को बचा-बचाकर
मजिल का श्रृगार बनेगा दीपक मेरा ।
मेरा पूनम विहाग नहीं क्या फूलों पर फिर खिल पायेगा ।
मेरा अन्तिम हास नहीं क्या यह दीपक भी जल पायेगा ।।

1952

कल्पना की राजरानी

और तुम तो दूर चल दीं
कल्पना की राजरानी ॥

विकल रजनी का नभत्सर
कनक-पंकज तारिकायें,
मधुभरा चन्दा छिपा है
आज ले अभिसारिकायें ।

व्योम से मिलने धरा भी
आज चल दी मेघ पथ पर ।
और तुम तो दूर चल दीं
कल्पना की राजरानी ॥

मिट रहे निश्वास तम के
ज्वलन कण रो-रो बरसते,
मिलन का फिर भी शलभ ये
बन रहा है स्वप्नगामी ।

ज्योति-सिहरन अग्निका भी
आज जलती दीप-रथ पर ।
और तुम तो दूर चल दीं
कल्पना की राजरानी ॥

मैं खडा इस पार नीरव
थकित-जीवन के किनारे,
चचला हँसती गगन मे
गर्जना हँसती पवन में ।

चल पडी बरसात चुपके,
आज आँसू की डगर पर ।
और तुम तो दूर चल दीं
कल्पना की राजरानी ।।

1952

साध सँजोये बैठा हूँ मैं मन का दीपक जलता है ।
मदिर कल्पना की बाँहों में सुख का सपना पलता है ।।
विश्वासों की बाँह थामकर, तुम तक शायद पहुँच सकूँ ।
इसी आश में साँसों का यह थकित कारवाँ चलता है ।।

उठा पूनम का चाँद

उठा पूनम का चाँद क्षितिज पर
जब धीरे आ कर ।
जगीं मेरी सोई स्मृतियाँ,
मानस की खोई निधियाँ,
और कल्पना ने अतीत के प्रांगण में जाकर-
पुकारा आँसू बरसा कर-
ओ मेरे भोले मीत,
सिसकते आशामय संगीत,
मौन क्यों बन बैठे हो आज,
अरे, मेरे प्राणों के राज ।
भुलाया मैंने सब संसार
तुम्हारे गीतों को पा कर ।

जाग रही है आज व्यथा
मेरे अन्तर की मीत,
आज उड़ा रे प्यासा फिर से
मन का स्मृति कीर,
कि पा जाऊं फिर सूनी डाल
करूंगा नवल नीड-निर्माण,
मिले शायद खोया अनुराग
तुम्हारे गीतों को गा कर ।

याद आती हैं बीती रात,
नीम औ, पीपल के पत्ते
सुना करते थे अपनी बात,
दीप का धूमिल मन्द प्रकाश,

और था चन्दा का आकाश ।
दिशा से मधुमय जीवन-गीत
सुनाती भोली ग्रीष्म निशीथ,
शीत किंचित थी मृदुल बयार ।
चाँद हँसता था हमको देख,
देखकर हँसते थे हम चाँद-
कि कितना शीतल अपरम्पार
हमारा नेह-भरा संसार ।

श्वेत थी छत की शुभ्र मुँडेर
पवन हम पर बरसाता था
रजत किरणो के रजकण घेर ।
तभी मैं जाग पड़ा मानो-
अरे ये कैसे दो-दो चाँद
एक सोया वक्षस्थल पर
दूसरा था किरणों के पार ।

और मैंने देखा था आह
हमारी भीगी थीं आँखे,
बिन्दु बन बनकर झरता था-
हमारे मन का सजल विहाग ।
न जाने किसने तभी कहा-
अरे ये है अन्तिम मनुहार ।
विदा की ओ निष्ठुर वेला,
मिला क्या हमको विलगा कर ।

उठा पूनम का चाँद क्षितिज पर,
जब धीरे आ कर ।।

1952

अब तो आजा, ओ परदेशी !

उदय हुआ है नील गगन में
हिम का मीठा चाँद चमन में,
तारों के फूलों ने हँसकर
बरसाये हैं सपने मन मे ।

ऑखो मे आँसू भर आये
अब तो आजा, ओ परदेशी ।

पलको को तुम पीर दे गये
मन को मीत, अधीर दे गये,
गये दूर विस्मृति-अचल पर
नयनो को तुम नीर दे गये ।

स्मृति-पथ पर दीप जलाये
अब तो आजा, ओ परदेशी ।

1952

नयन-दीप में स्नेह-अश्रु भर
सदा प्रतीक्षा-पथ निहारा ।
एक झलक भी ना मिल पाई
जीत गये तुम मै ही हारा ।।

मुझको स्वप्न तुम्हारे आते

मुझको स्वप्न तुम्हारे आते ॥
सो जाता जगती का कलरव
रो-रो उठता दीपक भी जब
दीपशिखा के यौवन पर
पागल परवाने मिटते जाते ।
मुझको स्वप्न तुम्हारे आते ॥

भू पर रजत हास छा जाता
शशि शीतल पारा बरसाता,
छू-छूकर हिमवात कुसुम
कलिका को कठ लगाते जाते ।
मुझको स्वप्न तुम्हारे आते ॥

आहत स्मृति को दुलराता
दूरागत-स्वर धीर-बँधाता,
नयन-सीप के मीठे मोती
किन्तु न गिरने से रुक पाते ।
मुझको स्वप्न तुम्हारे आते ॥

1953

●

बोलो तो तुम कब आओगे

बोलो तो तुम कब आओगे ।

भूल गये हो क्या बरसातें
वे भीगी रिमझिम की रातें,
छू जाता हिमपवन अंग
परिहास किए जाता अनंग ।

लो, बादल तो फिर आज आ रहे,
बोलो तो तुम कब आओगे ।

एकाकी टीले के ऊपर
कोई वंशी में स्वर-भरभर,
याद किए जाता प्रियतम की
स्वप्न-भरे अपने मधुवन की ।

प्राण, चले निश्वास जा रहे
बोलो तो तुम कब आओगे ।

आधी रात बरसती बेला
कैसा खेल मीत, ये खेला,
बाहर जल बादल बरसाते
भीतर नयन भिगोते जाते ।

फिर भी प्यास न बुझा पारहे,
बोलो तो तुम कब आओगे ।

1953

कौन तुम मेरे हृदय मे

बीन भी झंकार भी तुम
सृजन भी संहार भी तुम,
नीर नयनो मे सँजोये
कौन हो तुम लीन लय मे ।
कौन तुम मेरे हृदय मे ॥

पीर भी हो गीत भी तुम
हार भी हो जीत भी तुम,
चाँदनी भी चाँद भी तुम
कौन स्वप्नों के निलय में ।
कौन तुम मेरे हृदय मे ॥

कल्पना भी कान्ति भी तुम
सरलता भी शान्ति भी तुम,
अर्चना भी आरती भी
कौन आशा के उदय मे ।
कौन तुम मेरे हृदय मे ॥

1953



जिन्दगी की नींव हिल गई

जिन्दगी की नींव हिल गई,
पर ये तो कदम रुके नहीं ।

धूलि हँस उठी कि उठ रहा कगार बार-बार,
डूब ही गया कि रुक सकी न किन्तु वारि-धार ।
ज्योति कब रुकी कि रोकता रहा शलभ पुकार,
गिर गई कली कि रह गया सँभालता बयार ।।

एक प्रीति के लिए मिटा,
जी रहा है दूसरा अभी ।
जिन्दगी की नींव हिल गई,
पर ये तो कदम रुके नहीं ।।

एक गीत गारहा है बीन का हरेक तार,
एक गीत गूँजता रहा है जिन्दगी के पार ।
एक गीत बन गया है स्रोत पीर का अपार
एक गीत ही वही बना समष्टि का श्रृंगार ।।

एक गीत प्यार का वही,
ओठ से गिरा कि खो गया ।
ढूँढता फिरा हूँ जिन्दगी,
मिल रहा मुझे कहीं नहीं ।

कामना ही नीर बन गई,
पर ये तो कदम रुके नहीं।
जिन्दगी की नींव हिल गई
पर ये तो कदम रुके नहीं ।।

आरती का दीप जल उठा कहीं मजार पर,
अर्चना के गीत बन गये किसी की याद भर ।
चढ गई चिता की धूलि शीश पर विभूति-सी,
अर्घ्य शेष रह गया रे आँसुओ की धार पर ।।

प्राण भीगते ही रह गये,
गीत रह गये अपूर्ण ही ।
जिन्दगी की नींव हिल गई,
पर ये तो कदम रुके नहीं ।।

1953

चुप रहो रुक कर चलो
है सो रहा कोई यहाँ ।
ये गीत जो उसने सुनाये
सुन पड़ेंगे अब कहाँ ?

आज फिर कोई निशा मे जागता है

आज फिर कोई निशा मे जागता है ।
बुझ गये सब दीप श्वाँसों के सहारे,
विश्व के उस पार हँसते मौन तारे ।
नींद मे डूबी लता पर वात-निष्ठुर,
आज फिर बेदर्द चोटें मारता है ॥
आज फिर कोई निशा में जागता है ॥

सो गई हैं मस्तियाँ रगीनियाँ सब,
सो गये व्यापार मधु-व्यवहार भी सब ।
वेदना आहे कसक औ' सिसकियाँ भर,
आज मुझसे कौन आँसू माँगता है ॥
आज फिर कोई निशा मे जागता है ॥

1953

स्वप्न पलकों पर सजाया था जिसे
गीत अधरों से लगाया था जिसे ।
याद की सूनी डगर पर अश्रुबन
बह गया मोती बनाया था जिसे ॥

अलि ये बन्धन टूट न जाये

अलि ये बन्धन टूट न जाये ।

नयनो ने मोती बरसाये,
मनकी डोर पिरोती जाये ।
सपनो के सुखमय पकज-से,
उच्छ्वासो के उज्ज्वल रज से,
सजे रहे आशा के पथ पर
विश्वासो के दीप जलाये ॥

अलि ये बन्धन टूट न जाये ।

सरल दिनो की अमर कहानी,
भूले से वो भोले प्राणी ।
रात चाँदनी मधु-बिखराती,
पवन रागिनी विकल बनाती ।
भूल गये क्या, निश्वासो से-
तभी बँध गये थे मन भाये ॥

अलि ये बन्धन टूट न जाये ।

रजनी के वे काले बादल,
आते थे पानी से भर-भर ।
कहते अपने मौन अधर पर,
साथी तुम धरने को नव स्वर ।
भूल गये हो क्या बरसाते,
जब भीगे-से गीत सुनाये ।

अलि ये बन्धन टूट न जाये ।

1953

जाओ रे तुम साथी मन के

जाओ रे तुम साथी मन के ।
छलक उठे चुपके पलको पर,
जल-कण मृदु-कम्पन के ।

मुक्त गगन पर जागे तारे,
प्राणो मे सगीत पुकारे ।
आशा की नव-पखुरियो पर,
जागे स्वप्न तुम्हारे ।

जीवन से नवराग बिखरते,
आज किसी बन्धन के ।
जाओ रे तुम साथी मन के ।

बना पथिक का एक सहारा,
उदय हुआ ज्यो सध्या तारा ।
दूर निशा के अधकार मे,
विश्वासो का गीत तुम्हारा ।

आज थका रे मन का पछी,
गिनता दीप गगन के ।
जाओ रे तुम साथी मन के ।

प्रतिपल आश लिये दो नैना,
साथी, भुला न इनको देना ।
इनमे स्मृति-भरी कामना,
केवल नीर बने ना ।

भीग उठे सगीत, अधूरे
सपने रे जीवन के ।
जाओ रे तुम साथी मन के ।

1954

तारो के उस पार बैठकर गाने वाले !

तारों के उस पार बैठकर गाने वाले,
गूंज रहा मेरे मन मे संगीत तुम्हारा ।

और सभी जीवन के राग बिखरते जाते,
किन्तु तुम्हारा ही स्वर अधरो पर आ जाता ।
कम्पित होता कंठ, अर्चना भीगी जाती,
नयनो मे बरसात समाती जाती चुपके ।
थक जाती निश्वास, आरती किन्तु तुम्हारी,
एक बार भी कभी न पूरी हो पाई रे ।
दीप बुझाये प्राण, चाँदनी बन कर ही फिर -
छा जाये जीवन पर मधुर अतीत तुम्हारा ॥

तारो के उस पार बैठकर गाने वाले ।
गूँज रहा मेरे मन मे संगीत तुम्हारा ॥

झरे कामना-कुसुम दृगो से, जीवन भीगा,
किन्तु अधूरी ही वन्दन की रही मालिका ।
श्वासो की जर्जर नौका मँझधार पा गई,
फिर भी छाया दूर तुम्हारी, दूर किनारा ।

बिछुड गये आशाओ के स्वप्निल गलियारे,
बन-बन भटक रहा मन का बेसुध बनजारा ।
सपनो से मत रुँधो, मेरे गीत दुलारे,
जीत गये- तुम जीत गये मैं ही तो हारा ।

तारो के उस पार बैठकर गाने वाले,
गूँज रहा मेरे मन मे सगीत तुम्हारा ।।

सूने नभ के पैरो पर फिर-फिर टकराती
याद तुम्हारी भीगी पलको पर सो जाती ।
व्याकुल होते प्राण, चेतना पख-पसारे,
मूक, तुम्हारी व्यथित धरा पर उडती जाती ।
व्यथा-लिये जीवन-भर मेरे गीत तुम्हारी,
निश्वासो के चरण चिन्ह पर शीश झुकाते ।
ओ रजनी के पथ पर दीप जलाने वाले,
भटक रहा फिर भी जीवन मे मीत तुम्हारा ।

तारो के उस पार बैठकर गाने वाले ।
गूँज रहा मेरे मन मे सगीत तुम्हारा ।।

1954



याद तुम्हे भी आती होगी

अलसाये पलको की छाया मे –
जलकण बरसाती होगी ।
याद तुम्हें भी आती होगी ॥

दृष्टि-पथ पर भीड लगाकर
कभी-कभी सध्या के तारे,
आ-आकर एकान्त क्षणो मे,
करते होगे तुम्हे इशारे ।

बिखर कपोलो पर जलरेखा
चुपके से बह जाती होगी ।
याद तुम्हे भी आती होगी ॥

रजतरूप बरसाता होगा
बिखरी कजरारी अलको पर,
मधुमय-स्वप्न सजाता होगा
चाँद तुम्हारी नम पलको पर ।

बरसाती सूनी रातो की,
वशी तुम्हे जगाती होगी ।
याद तुम्हे भी आती होगी ॥

नभ मे वन्दनवार बनाते
राजहस चुपके से जाते,
पीर-नहायी प्राणो की दमयन्ती,
तुम्हे अधीर बनाते ।

द्वार-खडी अलसायी बेला
अपनी माँग सजाती होगी ।
याद तुम्हें भी आती होगी ॥

अपने-अपने भुज फैलाये
महामिलन की आश लगाये,
शलभ भी जले, ज्योति भी जले
लगन लगी रे, धीर न आये ।

युगयुग की यो प्रीति पुरानी
प्रतिपल जलती जाती होगी ।
याद तुम्हे भी आती होगी ॥

अलसाये पलको की छाया मे-
जल कण बरसाती होगी ।
याद तुम्हे भी आती होगी ॥

1956



ओ सपनो की छाया

ओ सपनो की छाया !
रजनी के पखो पर आना,
सोये-मन की पीर-जगाना
किसने तुम्हें सिखाया ?
ओ सपनो की छाया !

उलझी-सासो मे लहराता,
प्रतिपल-प्रतिक्षण बुझता जाता ।
भीगे तन के नीचे मन का –
कैसा दीप जलाया ?
ओ सपनो की छाया !!

जनम-मरण का फेरा खाते,
नश्वर-देह सजाते जाते !
पीर-भरे पागल-प्राणो मे–
कैसा प्यार समाया ?
ओ सपनो की छाया !!

1958



मेरे गीत मुझे लौटा दो

मेरे गीत मुझे लौटा दो ।
इनमे मैंने सब कुछ पाया,
जीवन का सगीत सजाया ।
इनमे मेरे सपनो का ससार-
बसा है, तन-मन भाया ।
तुम्हे न भाये, मेरे रूँठे मीत
भले तुम फिर ठुकरा दो ।
मेरे गीत मुझे लौटा दो ॥

भूल गये तुम तो सब बाते,
काली और उजेली राते ।
सुख की सरगम मूक बन गई,
बिखर गईं सुधियो की पाते ।
भले भुला दो मेरे निष्ठुर मीत,
मगर कुछ तो मुस्कादो ।
मेरे गीत मुझे लौटा दो ॥

दूर पडा मन था भरमाया,
तुमने अपने पास बुलाया ।
दो प्राणो के मध्य बनी-
दीवार हटा दी भेद-मिटाया ।
इतना करदो अब तो मेरे मीत,
दर्द-मे उमर-डुबादो ।
मेरे गीत मुझे लौटा दो ॥

विश्वासो के दीप बुझाये,
निश्वासो के नीड गिराये ।
भटक रहा प्राणो का पछी,
जनम-जनम से ठोकर खाये ।
तुम सुख पाओ, मेरे भोले मीत-
करूँ क्या मुझे बता दो ।
मेरे गीत मुझे लौटा दो ॥

1962

विना तुम्हारे जीवन में कुछ सार नही है
दर्द भरा है गीतों में शृगार नही है ।
पथ प्रतीक्षा का है उस पर उमर अकेली
मन की वीणा मूक हुई झकार नही है ।।

तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ

तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।
झलकता रहा अर्चना-दीप मेरा,
छलकता रहा है सदा गीत मेरा ।
महकता रहा साँस का ये बसेरा,
सँभलता रहा स्वर सजाता रहा हूँ ।
तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।।

भुलाया मुझे रूपसी चन्द्रिका ने,
सुलाया मुझे बादलो की निशा ने ।
दिखाती रही नींद सपने अनेकों,
बहुत गीत मुझको सुनाये दिशा ने ।
सपन, रूप, स्वर ने छला-मन, मगर मैं-
तुम्हारे लिए तन-तपाता रहा हूँ ।
तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।।

बहुत बार आई प्रलय जिन्दगी मे,
रुकी सांस भी हर कदम लडखडाया ।
मुँदी आँख गति सब रुकी क्षीण-तन की,
मगर स्वर तुम्हारा मुझे खींच लाया ।
वही गूँज हर गीत मे गूँजती है
तुम्हारे लिए हूँ - तुम्हारा रहा हूँ ।
तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।।

किरण दीप ने रग मुझको दिखाये,
धनुष इन्द्र के बादलो ने बनाये ।
बहुत रूप धर के रिझाया कली ने,
कसम, जिन्दगी मे बहुत रग आये ।
न भूला कभी रूप केवल तुम्हारा,
सभी जिन्दगी मे भुलाता रहा हूँ ।
तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।।

भ्रमर गुनगुनाया, लहर ने सुनाया,
'कहाँ पी'- पपीहा नया दर्द लाया ।
प्रलय के भरे राग नभ मे जलधि ने,
मगर मैं तुम्हारा न स्वर भूल पाया ।
तुम्हारे दिए स्वर भरे कठ मे हूँ,
वही गीत मे गुनगुनाता रहा हूँ ।
तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।।

नयन से बरसती रही प्रीति-धारा,
तुम्हारे बिना मैं रहा बेसहारा ।
तुम्हारे धरे गीत अपने अधर पर,
निठुर, उम्रभर पथ-जोहा तुम्हारा ।
तुम्हारे लिए प्राण की लौ जलाये,
प्रणय-दीप तन मे जलाता रहा हूँ ।
तुम्हारे लिए गीत गाता रहा हूँ ।।

1962



ये जीवन यूँ ही जायेगा

ये जीवन यूँ ही जायेगा ।

मेरा जीवन गीत-दुलारा,
हास-अश्रु से सज्जित सारा ।
ओ प्राणो के प्राण तुम्हारा ।
बिना तुम्हारे गीत अधूरा-
कभी न पूरा हो पायेगा ।

ये जीवन यूँ ही जायेगा ।

बिन बोले ओ मीत, न छोडो,
नेह-लगाकर मत मुख मोडो ।
इसे जोडकर अब मत तोडो ।
टूट गया तो, विश्वासो का-
फिर यह बॉध न बॅध पायेगा ।

ये जीवन यूँ ही जायेगा ।

समझो अन्तिम बार मिला है
यह अवसर अनुपम वेला है ।
जो यह अन्तिम बार खिला है,
बिखर गया तो निश्वासो का-
फिर यह फूल न खिल पायेगा ।

ये जीवन यूँ ही जायेगा ।

तुमको कितनी बार बुलाया,
पर निष्ठुर तुमने ठुकराया ।
ठोकर खाकर भी मुस्काया,
टूट गया यदि मन का दर्पण-
तो फिर बिम्ब न बन पायेगा ।

ये जीवन यूँ ही जायेगा ।

इतने अरे कठोर बन गये,
सध्या, मेरे भोर बन गये ।
तन के सुख, दुख घोर बन गये,
पर ना पिघले तुम निर्मोही-
भटका प्राण-पछी गायेगा ।

ये जीवन यूँ ही जायेगा ।

1962

नयनों में है चिर आमत्रण
तुम कब साध पुजाओगे ।
जनम-जनम से बाट जोहता
ना जाने कब आओगे ।।

तुम आये

तुम आये मेरे गीत मुखर हो पाये ।

भूला जीवन के मरु की प्यास पुरानी,
ले रही मोड सुधियो की व्यस्त कहानी ।
मुस्कानो का आलोक हृदय मे आया
आलिंगन का मधुमास उरों को भाया ।
उजडी बगिया पर तुम बहार बन छाये ।

तुम आये मेरे गीत मुखर हो पाये ।।

चल पडे चरण पथ पर बेसुध-सपनो से,
बीते कटक भी लगते अब अपनो से ।
कितना प्यारा पथ जिस पर मुझे बुलाया,
मेरे मन मे आशा का दीप-जलाया ।
प्राणो को प्यार-गुलाब सदा महकाये ।

तुम आये मेरे गीत मुखर हो पाये ।।

मेरी सम्पूर्ण उमर के तुम सुहाग हो,
मेरे ही जनम-जनम के तुम सुभाग हो ।
खो गया तुम्हीं मे मेरा सब अपनापन
अर्पण-सर्वस्व, करो स्वीकार समर्पण ।
साँसों की सरगम पर ये स्वर सरसाये ।

तुम आये मेरे गीत मुखर हो पाये ।।

1965

मेरे गीत कौन पहचाने

मेरे गीत कौन पहचाने ।
मन के तीर अधीर बहाये,
दरद-सँवारे पीर-नहाये ।
जनम-मरण के फेरे खाये,
फिर भी ये जग से अनजाने ।
मेरे गीत कौन पहचाने ॥

बरन-बरन की एक कहानी
बोल-बोल अनबोली बानी ।
जुग-जुग से बेमोल बिकानी,
फिर भी इन्हें न कोई जाने ।
मेरे गीत कौन पहचाने ॥

वृन्दा-विपिन अयोध्या भटके
परसे तीरथ हर पनघट के ।
वासी भोर-साँझ के तट के,
फिर भी कहीं न अपर कहाने ।
मेरे गीत कौन पहचाने ॥

1966



आकांक्षा

यदि किसी का शुभ जीवन
बन सके आलोकमय,
युग-युगो तक प्राण-का
दीपक जलाऊ मै ।

यदि किसी की प्रीति-की
गगा सदा शुभ लहर पाये,
प्राण के बादल झुकाता
बरस जाऊ मै ।

यदि किसी की कल्पना
साकार बन पाये,
युगो की भावनाओ का
समर्पण भी लुटाऊ मैं ।

धर सके अपने अधर पर
गीत को कोई,
उम्र के स्वर सींच कर
उनको सजाऊ मै ।

यदि किसी की आशा का-
उपवन रहे कुसुमित,
युगों की कामनाओं को
वहीं चुपके बसाऊ मैं ।

यदि किसी का तृषित-
जीवन तृप्त हो जाये,
युग-युगो तक प्राण का
निर्झर बहाऊ मै ।

यदि किसी का शुभ्र-जीवन
बन सके आलोकमय,
युग युगो तक प्राण का
दीपक जलाऊ मै ।

1972

थक कर रोज बटोही सूरज रात पड़े सो जाता ।
जगता है अरुणाई ले फिर सफर शुरू हो जाता ।।
अगर निराशा का तम छाये जीवन में घिर-घिर कर ।
आशा का नवदीप जलाओ फिर-फिर सँभल-सँभल कर ।।

ओ मीत

जीवन की दीपशिखा,
नई ज्योति दो ।
जीवन की वीणा,
अब नई प्रीति दो ।
स्वर्णिम हों प्राण मीत
सुरभित हों गान मीत ।
जन्म सफल हो जाये
नव प्रतीति दो ॥

1971

स्मृति साथ चले

दीप शिखा की स्वर्ण-प्रभा में
पुलकित-प्राण पले,
जनम-जनम तक अमर-स्नेह से-
शावलित दीप-जले ।
मन-दीपक, स्मृति-की बाती
अपने जीवनभर की साथी,
तन-सरगम पर ज्योति-जगाती
अपने साथ चले ।

1972

ऐसा दर्द दिया है तूने

ऐसा दर्द दिया है तूने,
जनम-जनम तक पीर न जाये ।

बिखरे-निश्वासों की आशा,
आँखों की अनबोली भाषा ।
तिल-तिल मिटती युग-युग से-
इन प्यासे-सपनों की अभिलाषा ।
जीवन की सुनसान-डगर पर,
भटक रही है, ठोकर खाये ।
ऐसा दर्द दिया है तूने,
जनम-जनम तक पीर न जाये ॥

माँग-भरा सिन्दूर भुलाया,
हाथों में जो हाथ थमाया ।
आँखों से बहने वाली-
गंगा-जमुना को भी झुठलाया ।
जनम-जनम तक साथ निभाने के-
वे वादे कहाँ भुलाये ।
ऐसा दर्द दिया है तूने
जनम-जनम तक पीर न जाये ॥

बीती यादो मे उलझा-मन,
प्रतिपल दीपक-सा जलता है ।
बाँहो का चिरपरिचित बन्धन,
अनजानी छवि-सा छलता है ।
ओठो की अनकही कहानी,
मनमे पडी-पडी मुरझाये ।
ऐसा दर्द दिया है तूने
जनम-जनम तक पीर न जाये ॥

ऐसी क्या थी भूल कि तूने-
गीतो का श्रृगार हर लिया ।
शब्दो को वीरान बनाकर,
जीने का अधिकार हर लिया ।
अब आँसू से भरी जिन्दगी,
बोल-बोल कैसे कट पाये ।
ऐसा दर्द दिया है तूने,
जनम-जनम तक पीर न जाये ॥

1972



आओ प्राण !

जीवन की ज्योति तुम,
ज्योति की किरण तुम,
बीत चले उम्र के-
अब तो सब सुख-सपन ।

जीवन मे आओ प्राण !
मिट जाये तम ।।

जीवन की बीन तुम,
बीन स्वर-नवीन तुम,
दूर हो निराशा के-
मौन और बेबस क्षण ।

जीवन मे आओ प्राण !
गूँज उठे मन ।।

जीवन का गीत तुम,
गीत मे सगीत तुम,
भावो के मेरे मीत-
याद करो पुन प्रण ।

जीवन मे आओ प्राण !
धन्य हो जनम ।।

जीवन की मंजिल तुम,
मंजिल की राह तुम,
थक रहा साँसो का-
सफर क्षण-प्रति-क्षण ।

जीवन मे आओ प्राण !
सफल हो चरण ॥

जीवन की गंगा तुम,
गंगा की लहर तुम,
टूट चली आशा की-
कश्ती अब ओ हमदम !

जीवन मे आओ प्राण !
अब आओ साहिल बन ॥

जीवन-सुहाग तुम,
सुहाग के सिन्दूर तुम,
बैठे हैं आँसुओ की माला
हम पहन-पहन ।

जीवन मे आओ प्राण !
आओ बनके सनम ॥

1975

●

कैसे तुम्हे मनाऊं मैं

मेरा जीवन रीती-गागर,
प्यास तुम्हारी फैला सागर,
तृप्ति कहाँ से लाऊ मैं-
कैसे तुम्हे मनाऊ मैं ।

मेरा जीवन बुझता-दीपक,
रूप तुम्हारा व्यापक विस्तृत,
कैसे दर्शन पाऊ मैं ?
कैसे तुम्हे मनाऊ मैं ?

मेरा जीवन सूना-पीपल,
झरे-पात सब सूखे-डन्ठल,
छाँह कहाँ से लाऊ मैं ?
कैसे तुम्हें मनाऊ मैं ?

मेरा जीवन नीरस-बादल,
भटक रहा बिनछोर गगन-तल,
बरस कहाँ से पाऊ मैं ?
कैसे तुम्हे मनाऊ मैं ?

मेरा जीवन सूखा-मरुथल
शूल-धूल से तपता प्रतिपल,
कैसे फूल खिलाऊ मैं ?
कैसे तुम्हे मनाऊ मैं ?

मेरा जीवन सूना-जीवन
शेष नहीं है कोई रुनझुन,
कैसे गीत सुनाऊ मैं ?
कैसे तुम्हे मनाऊ मैं ?

1991

जिन्दगी आज तक सिर्फ वीरान है

भूल ऐसी हुई, शूल ऐसा चुभा,
जिन्दगी आज तक सिर्फ वीरान है ।

कौन तारा चला जन्म से साथ मे,
हर कदम पर मुझे हार ही बस मिली ।
कौन वह, भाग्य मे शून्य जिसने लिखा,
दीप-सा जल रहा आज तक प्राण है ।

प्यार से सींचकर बेल जो की हरी,
सिर्फ कॉंटे उगे फूल कोई नहीं ।
क्या पता क्या हुआ शाख भी जल गई,
सब लुटा, मन-चमन आज सुनसान है ।

ढूँढता ही रहा मैं सही रास्ता,
दूर मुझसे यों मंजिल खिसकती गई ।
शोख-सपने समेटे गुजर ही गया,
छोड तनहा मुझे वक्त का कारवॉं ।

स्वर्ण मैंने छुआ कोयला बन गया,
रेशमी-रज्जु तो विष-भरा सर्प था ।
रक्त-किंशुक समझ पॉंव मैंने धरा,
ज्वाल अंगार-सा तप्त वह दर्प था ।

न मिटा जारहा न जिया जारहा,
बेबसी की घुटन मे फँसी जान है ।
क्या पता, क्या हुआ लुट गया आशियाँ,
पस्त हिम्मत हुई अक्ल हैरान है ।

खोज करने चला मैं सुधा के लिये,
हर दिशा में हलाहल उमडता मिला ।
यो हुआ हाल-बेहाल ऐसा अरे,
ढह गया कामना-कल्पना का किला ।

भूल ऐसी हुई शूल ऐसा चुभा,
जिन्दगी आज तक सिर्फ वीरान है ।।

1996

आये तुम जीवन में बसन्त की बहार से
झोंका-सा बनकर समीर का चले गये ।
रूप और प्रेम की मुदित मनुहार से
आह मेरे तन-मन-प्राण सब छले गये ।।

कैसा दुनियाँ का दस्तूर

कैसा दुनियाँ का दस्तूर,
एक मिटे दूजा मुस्काये ।
अजब प्यार की यह परिपाटी,
कोई रोये, कोई गाये ।

दीप-शिखा की परिक्रमा कर,
सदा शलभ ने पंख जलाये ।
गर्वोन्नित चंचल-शाखों ने,
धरती पर सब सुमन गिराये ।

बाँहों के बन्धन में आये,
सब फल डालों ने छिटकाये ।
काँटों में हँसते गुलाब पर,
भौंरा सिर धुन-धुन पछताये ।

सुध-बुध खो पागल चकोर है-
कब से बैठा आस लगाये ।
अपनी धुन में मगन चन्द्रमा
युग-युग से उसको तरसाये ।

अजब प्यार की यह परिपाटी
इक तड़पे दूजा मुस्काये ।
इक सिसके तो दूजा गाये ।।

1996

मुझको सौ-सौ बार छला रे

मुझको सौ-सौ बार छला रे,
तुमने मेरे मन की छाया ।

मैंने ढूंढा साथ तुम्हारा,
मैंने थामा हाथ तुम्हारा ।
मगर तुम्हें पाकर भी पा कब-
सका, प्राण मे शूल चुभाया ।

रिमझिममयी नशीली राते,
शरद-शिशिर मधुरितु की बाते ।
जूही के जूड़े मे गूँथे,
सारे सपनो को बिसराया ।

सूना है मन सूना है तन,
सूना है जीवन का आँगन ।
उजड गया रसमय वह कानन,
जो था तुमने स्वय लगाया ।

जीना भी सब व्यर्थ हो गया,
कैसा अरे अनर्थ हो गया ।
अर्थहीन उच्छ्वास रह गये,
कुछ भी मेरे हाथ न आया ।

1996

जब गीतों का मौसम आता

जब गीतों का मौसम आता,
मुझे दर्द तब बहुत सुहाता ।

जीवन के सब ताने-बाने,
लगते हैं मुझको अनजाने ।
चाँद-सितारों की छाया में,
मेरा मन सपने दुहराता ।

याद बहुत आते हैं वे क्षण,
एक होगये थे जब दो मन ।
दूरागत वशी का स्वर-
प्राणों में सोई पीर जगाता ।

बीत गये जो सुख-दुख सारे,
आ जाते जब मन के द्वारे ।
मेरे अन्तरतम का साथी,
मुझको बहुत अधीर बनाता ।

जब गीतों का मौसम आता,
मुझे दर्द तब बहुत सुहाता ।

1996



मेरा मन अपराधी अपना

मेरा मन अपराधी अपना,
यह दुनियाँ को समझ न पाया ।

सबको इसने माना अपना,
हुआ न पूरा कोई सपना ।
दुखी हुआ हर आह सुनी जब,
हर आँसू ने इसे रुलाया ।

सब खुशियाँ बाँटी जीवन की,
साध-पुराई हर धड़कन की ।
न्यौछावर करदीं सब साँसे,
पर न किसी ने गले लगाया ।

रंग सजाये हर दामन में,
अपने हर साथी आँगन में ।
नमन किया हर साँझ-सबेरे,
जिस द्वारे पर दीप-जलाया ।

जिस घर मंगल-कलश धराये,
जिस मंडप पर फूल सजाये ।
गीतों की चूनर लहरादी-
उसको भी तो साथ न भाया ।

अब तक गूज रही शहनाई,
जो अन्तरतम मे गहराई ।
ऐसी बही प्रीति की गगा,
जिसमे सारी उमर नहाया ।

वे आलिगन बँधे हुए पल,
ओठो पर खिलते गुलाब-दल ।
हर मौसम मे साथ निभाने-
का था वादा, कहाँ निभाया ।

मेरा मन अपराधी अपना,
यह दुनियाँ को समझ न पाया ।

1996

उम्र हुई परित्यक्ता नारी-सी मोद-शून्य
दुनियाँ के राग-रग लगते अगार-से ।
आह कोई मेरा बन मुझे दर्द दे गया
वचित कर मुझको रस-राग-से शृगार-से ।।

मिल जाता यदि साथ तुम्हारा

मिल जाता यदि साथ तुम्हारा,
ये जीवन यो भार न होता ।
यादो का सुरभित-उपवन,
श्वासो का कारागार न होता ।

गीतो के फूलो का हार-
सजाया था मैंने अर्चन को ।
नयनों के दीपो का सब-
अनुराग सजाया था वन्दन को ।
तुम यदि अपना लेते तो-
मन-मन्दिर बिखर मजार न होता ।।

जनम-जनम से महामिलन की,
चाह भरी चिर-आश लिये था ।
पल-पल छिन-छिन लगन लगाता,
साध भरा विश्वास लिये था।
बहुत जतन से जिसे सँवारा,
धूलि-ध्वस्त श्रृंगार न होता ।।

थोडी प्यास बुझाई होती,
थोडी तपन मिटाई होती ।
जन्म-मरण के परिक्रमण मे,
कुछ तो प्रीति निभाई होती ।
प्राणों का यह पागल पाखी,
फिर इतना लाचार न होता ।।

1996

सच है विगत जनम का नाता

सच है विगत जनम का नाता,
वरना क्यो वह मुझे सताता ।

इस जीवन मे जिसे न जाना,
क्यो लगता जाना पहचाना ।
जो स्वर था बिल्कुल अनजाना,
क्यो मुझको मदहोश बनाता ।

जिन शक्लो को कभी न देखा,
वे सपनो मे मुझे रिझार्ती ।
पनघट-घाट नगर औ' घाटी,
मुझको अपने गले लगार्ती ।
जिस महफिल की राह न जानी,
उसका उत्सव मुझे लुभाता ।

तिल-तिल जलता दीपक-सा तन,
बुझ जाने को होता व्याकुल ।
स्मृति को सुलगाता फागुन,
नयनो को तरसाता सावन ।
चुपके से कोई आजाता,
जो पीडित-मन को सहलाता ।

सच है विगत जनम का नाता,
वरना क्यों वह मुझे सताता ।

1996

मैंने अब घर नया लिया है

मैंने अब घर नया लिया है,
लेकिन इसमें तुम मत आना ।
पहले ही बदनाम बहुत हूँ,
फिर बदनाम किया जाऊगा ।

फिर से दाग नहीं लग पाये,
कोई फाग न रग चढाये ।
अपना हो या निपट पराया,
कोई मुझे न छलने पाये ।
नई राह पर निकल पडा हूँ,
पीछे लौट नहीं पाऊगा ।।

जिनको कोई फर्क न पडता,
जो नित रिश्ते नये बनाते ।
स्वारथ-रत सम्बन्धो के-
जिनके नाटक जग को भरमाते ।
उनको मन पहचान गया है,
फिर से गले न मिल पाऊगा ।।

मैली चादर धुल न सकेगी,
अब तो होगी नई बनानी ।
छूट गये सब पात्र अधूरे,
सपनो-सी रह गई कहानी ।
अच्छा हो अब मुझे भुलादो,
फिर विश्वास न कर पाऊगा ॥

तेरे द्वार-लगे काँटो ने,
विंध छलनी कर दिया समर्पण ।
गलियों ने कालिख लिख-लिख कर,
सौ-सौ टूक कर दिया दर्पण ।
मनके इस टूटे-दर्पण मे,
कैसे अब दर्शन पाऊगा ॥

मैंने अब घर नया लिया है,
लेकिन इसमें तुम मत आना ।
पहले ही बदनाम बहुत हूँ,
फिर बदनाम किया जाऊगा ॥

1996



उस किनारे ले चलो माँझी मुझे

इधर तट सुनसान है वीरान है,
उस किनारे ले चलो माँझी मुझे ।

कामनाओ से जिसे दिन-रात सींचा,
उस विटप के फूल शूलो मे फँसे ।
भावनाओ की सुधा पर जो पली,
उस वल्लरी पर गरल ने जाले कसे ।

बाँह के झूले अधर मे रह गये,
आँख के सपने गिरे सब धूल मे ।
महफिलो की दीपमाला बुझ गई,
रूप के प्रासाद भी सब ढह गये ।

रग यादो के बिखर कर बह गये,
उस किनारे ले चलो माँझी मुझे ।।

अर्चना का अर्घ्य पलको पर सजाया,
वन्दना का गीत अधरो से लगाया ।
प्रीति के पावन कलश की बाँह थामे,
आरती के दीप-सा तन को तपाया ।

आस्था के पुष्प सब मुरझा गये,
हो नहीं पाया मगर अभिषेक पूरा ।
आँसुओं मे चाह का चन्दन बहा,
समर्पण का रह गया सपना अधूरा ।

वे महल विश्वास के सब ढह गये,
उस किनारे ले चलो माँझी मुझे ।।

प्रीति प्राणो को मिले, चिर मीत मन को,
उधर शायद चिर प्रतीक्षित से मिलन हो ।
गीत अधरो को मिले, दर्शन नयन को,
उधर शायद भोर की पहली किरन हो ।

लुट चुका रंगीनियो का मस्त मेला,
रूप-रस-स्वर-गन्ध का जो खेल खेला ।
कारवाँ सब जा चुका अपने सफर पर,
रह गया मन अब यहाँ बिल्कुल अकेला ।

थक चुके दर-दर भटकते अब चरण,
उस किनारे ले चलो माँझी मुझे ।

1996

●

फिर अधूरी रह गई अपनी कहानी

साँझ का साया उमर पर छा गया,
फिर अधूरी रह गई अपनी कहानी ।

जन्म जन्मान्तर बिताये आश में,
चिर-मिलन के ज्योतिमय विश्वास मे ।
प्राण-प्राणो मे समाने के लिये,
बाँधने-बँधने परस्पर पाश मे ।

तरसते ही रह गये सपने मगर,
साँस का आँचल सिमटता जा रहा ।
धूप-छाया के भ्रमित बाजार मे,
जिन्दगी बेमोल सी यूँ ही बिकानी ।
फिर अधूरी रह गई अपनी कहानी ।।

मानके मनुहार के दीपक जलाये,
हास के परिहास के गजरे सजाये ।
प्रीति का विश्वास पलको मे सँजोये,
हर-जनम मे तृषित-पल यू ही बिताये ।

आँख भर आई प्रतीक्षा में मगर,
तुम न आये और वह बेला न आई ।
याद की पगडंडियों में फिर भटकती,
जिन्दगी यूं ही पडेगी अब बितानी ।
फिर अधूरी रह गई अपनी कहानी ।।

नींद की गहरी अँधेरी छा रही है,
नीड़ के तिनके बिखरते जा रहे हैं ।
दृष्टि के दीपक अनाश्रित से थके-से,
विर-व्यथा के साथ बुझते जा रहे हैं ।

किन्तु सुधियो की सुमरनी के सहारे,
चाह अपनी आस्था थामे हुए है ।
काश, अन्तिम गीत तक भी चले आते,
आँसुओ की पीर भी तुमने न जानी ।
फिर अधूरी रह गई अपनी कहानी ।।

1996

आशा का यदि दीप न होता
मन तम से भर जाता ।
मुखरित कोई गीत न होता
सब कुछ शून्य-समाता ।।

जनम-जनम बस एक कहानी

जनम-जनम बस एक कहानी,
जो न कभी पूरी हो पाई ।

मेरे गीतो ने तेरे आँगन-
की तुलसी को नहलाया ।
स्वर की वन्दनवार बनाकर,
तेरे घर का द्वार-सजाया ।
आँसू की गंगा पर तेरे-
मन के छोर नहीं छू पाई ॥

काली उजियाली रातो मे-
सपनो की बारात सजाई ।
सौ-सौ बार समर्पित करदी,
चाह-भरी अपनी तरुणाई ।
फिर भी सूनी बाहे तेरी
छाया तक भी पहुँच न पाई ॥

गिन-गिन कर ताने देती है,
मुझको मधुरितु की अँगड़ाई ।
शरद-शिशिर के मधुर-परस,
बरसातो की रिमझिम शहनाई ।
जाने कैसे अनजाने मे
मैंने तुझसे लगन लगाई ॥

धीरज का तट टूट बहा है,
साँसो का सग छूट रहा है ।
रूप-रग के परिचित घट का,
अब तो अन्तिम घूँट रहा है ।
मैं तुझको समझा था अपना,
तू निकली तस्वीर पराई ॥

1996

जाने कैसा दर्द समाया है जीवन में ।
हर पल दीपक-सा जलता रहता है मन में ॥

मन की भाषा भूल गये तुम !

मन की भाषा भूल गये तुम !

बादल भी जब झुक-झुक जाते,
झुरमुट पवन-झकोरे खाते,
आम्र वृक्ष की नन्हीं टहनी-
पर बैठे खग-जोड़े गाते ।
एक दूसरे की आँखो मे
झॉक मुस्करा पड़ते थे हम ॥
मन की भाषा भूल गये तुम !

शान्त झरोखा जो मन्दिर की-
ओर खुला रहता था हरदम ।
फूली-सरसो की मस्ती, आकर-
करती थी तन को चेतन ।
क्या होगया अरे, कैसे क्यो
भुला दिए बीते वे सब दिन ॥
मन की भाषा भूल गये तुम !

वर्षा की झीनी फुहार छू लेती-
शयन कक्ष का दरपन ।
छू-छू कर वातास सहज कर-
देता था बाँहों के बन्धन ।
सैर कराते मेघ हमें नभ-भर
अलकापुर-नन्दन - कानन ।।
मन की भाषा भूल गये तुम !

चाँद-चाँदनी मोद मनाते,
जब अपने उन्मुक्त गगन में ।
हम अतीत की बातें करते,
ऊपर छतपर अपनी धुन में ।
थके-थके फिर जब सो जाते,
पता नहीं कब उग आता दिन ।।
मन की भाषा भूल गये तुम !

आँगन की तुलसी भी गुमसुम,
चुप है उस पर बिखरा-कुंकुम ।
एकाकी हर कोना घर का,
बुझा हुआ है दीपक तुम बिन ।
कैसे मुक्ति मिलेगी जाने,
व्यथा-भार से बोझिल जीवन ।।
मन की भाषा भूल गये तुम !

1997

पाया वह भी हुआ पराया

जीवन की उपलब्धि यही थी तुमको पाया,
किन्तु हाय दुर्भाग्य कि वह भी हुआ पराया ।

कहाँ गया वह सब कुछ जो था बिल्कुल अपना,
ह्रदय लगाया जिसको टूट गया वह सपना ।
बिखर गया वह नीड जतन से जिसे बनाया ॥

अठखेली चलती थी दिन भर, चुहल-हास भर देता था घर,
हर मौसम की मस्त बहारें, हमको गले लगातीं आकर ।
विलग हो गया सब कुछ जो मैंने अपनाया ॥

धूम मचाते थे ऑगन मे, त्यौहारों के दिन हम सग-सग,
दीप जलाते दीवाली के, तन-रग देते होली के रग ।
कहाँ गये वो पल, पलको पर जिन्हे सजाया ॥

जब सावन के झूले आते, मुझको अधिक अधीर बनाते,
यादो के बादल घिर आते, ऑसू पलको पर बरसाते ।
क्या अपराध किया था मुझको यू तरसाया ॥

1997



कौन स्वयं को छल पाया है

दुनियाँ भर को छलने वाला,
कौन स्वय को छल पाया है ।

तारे तोड व्योम से लाये,
मरुथल मे भी फूल उगाये ।
पहन मुखौटे तरह-तरह के,
चाहे जगभर को बहकाये ।
अपने गुपचुप अपराधो को,
निज से कौन छिपा पाया है ॥

हर कोई अवगत होता है,
बाहर क्या है भीतर क्या है ।
फिर भी अपनी दुर्बलताओं को-
किसने अभिव्यक्त किया है ।
कितना करो किन्तु चादर का-
दाग कभी ना छिप पाया है ।

कोशिश कितनी करो, नहीं
पर सत्य प्रकट हो ही जाता है ।
पल में भेद बताता चेहरे से
आँखों का जो नाता है ।
व्यर्थ छिपाना मन का रिश्ता,
यह कब गोपन रह पाया है ।

भेद भरी जो बातें होतीं,
बिना कहे ही जाहिर होतीं ।
लाख भुलावा दो जगभर को,
मन की पीड़ा पलक-भिगोती ।
अन्तर्मन तो सभी जानता,
क्या खोया है क्या पाया है ।।

1997

अनजाने में मन-वीणा के टूट गये सब तार ।
गीतों में संचित हो बैठा मूक-व्यथा का भार ।।
अन्तर की पीड़ा से भीगा सपनों का संसार ।
छूट गई हाथों से जीवन-नौका की पतवार ।।

अपना जीवन

अतुलनीय सोने सा जीवन,
मैंने नष्ट कर दिया यूं ही ।
अमृत पूरित अपने घट को,
मैंने भ्रष्ट कर दिया यूं ही ॥

जिसे दुलारा था प्रतिभा ने,
शब्द-अर्थ-लय की आभा ने ।
रंग-रेख-स्वर की ममता ने
मन की स्वर्गिक सुन्दरता ने ।
उम्मीदों से भरा चषक,
ढुलकाकर व्यर्थ कर दिया यूं ही ॥

नेह-दया से जो पूरित था,
ममता ने जिसको पाला था ।
वैभव-पूर्ण विपुल मस्ती ने,
जिसका शैशव रंग डाला था ।
प्यार भरी निज तरुणाई को,
शूलों-बिद्ध कर दिया यूं ही ॥

भाग्यवशात मिली जो देही,
मैंने उसे व्यर्थ मथ डाला ।
आत्मीयता के भ्रम-छल ने,
तन-मन को दूषित कर डाला ।
मुझको घर दीपित करना था,
तम से और भर दिया यूं ही ॥

1997

मेरे लिए हृदय सर्वोपरि

मेरे लिए हृदय सर्वोपरि,
मैंने केवल उसे सुना है ।

मुझको जो भी कहा बुद्धि ने,
उस पर कभी न ध्यान दिया है ।
वह जीवन निर्देशक मैंने-
सदा हृदय का कहा किया है ।
एक ओर थी आत्मतृप्ति,
सब भावों-सवेगों की सृष्टि ।
और दूसरी ओर छलावा,
स्वार्थ वृत्ति और स्वसतुष्टि ।
मैंने तो बस हृदय चुना है,
मैंने केवल उसे सुना है ॥

तुमने कहा बुद्धि का माना,
लाभ-हानि का मग-पहिचाना ।
वही किया जिसमें निज-सुख हो,
वही सदा श्रेयस्कर माना ।
ध्यान रखा लोगों का कहना,
निज मतलब में चौकस रहना ।
जीवन दर्शन यही तुम्हारा,
व्यर्थ जगत का दुख ना सहना ।
तुमने निज-हित पथ चुना है,
ऐसे ही स्वस्वप्न बुना है ॥

मुझमे तुम मे बहुत फर्क है,
इष्ट तुम्हारा सिर्फ तर्क है ।
स्वार्थ-साधना स्वर्ग तुम्हारा,
ऐसा करना मुझे नर्क है ।
मेरा जीवन सदा समर्पित,
सबका दुख हरने को अर्पित ।
अपना सुख-सचय करने मे,
फुर्सत तुम्हे मिली कब गर्वित ।
मैंने तो बस यही गुना है,
जो अन्तर ने कहा सुना है ।।

मेरे लिए हृदय सर्वोपरि,
मैंने केवल उसे सुना है ।

1997

जिसके अन्तर मे गगा
वह गीत प्रीति के गाता ।
मन का उज्ज्वल होना [illegible]
जीवन को स्वर्ग बनाता ।।

जिन्दगी

बहुत सहज होकर जीनेकी की अभिलाषा,
किन्तु सवालो से सारी घिर गई जिन्दगी ।

भोग-राग से बँधकर कुचल दिया हृदय को,
नेह-सिक्त जीवन को ठुकराया निर्दय हो ।
मृदु-ममत्व को रौंद दिया तन का विक्रय कर,
और किया विश्वासघात चिर गई जिन्दगी ।

झुठलाई सब गाथाये जो चर्चित जन में,
मन की खातिर तन-त्यागा था अपनेपन मे ।
हाय किया छल ऐसा कहीं न सुना न जाना,
अपनी ही नजरो से यो गिर गई जिन्दगी ।।

किया निलज उपहास प्रीति का जगत जताकर,
साथ निभाने की सारी सौगन्ध भुलाकर ।
सर्वसमर्पण करके जो उपजी थी आशा,
ध्वस्त हुई यों दर्शों से बिंध गई जिन्दगी ।।

विश्वासो की डोर झटककर ऐसी तोडी,
साँसो के इकतारे की भी तान मरोडी ।
तन के स्पन्दन तक से हट गया भरोसा,
सारे जग के रिश्तों से फिर गई जिन्दगी ।।

1997

ये जीवन-दीपक की बाती

ये जीवन दीपक की बाती,
तिल-तिल करके बुझती जाती ।
प्राण ! तुम्हारे आने तक ये-
बुझ ना जाये शीश झुकाती ।
अब आ जाओ इसे सँभालो,
टिमक रही यह द्वार, तुम्हारे ॥

श्वाँस-श्वाँस मे याद तुम्हारी,
जनम-जनम से पलती आयी ।
कितने वेश धरे इस तन ने,
फिर भी प्यास न कम हो पायी ।
क्या जाने कब तक छलकेगी,
तेरी गागर नेह-दुलारे ॥

यह सारा-सारा जग फीका,
तेरे रूप-विभव के आगे ।
जग के कण-कण में चेतनता,
तेरे दरस-परस से जागे ।
अणुभर मुझ पर भी बरसाओ,
ओ करुणा का सागर-धारे ॥

व्यथा-हरो बाँहों मे भरलो,
इसे सहारा देकर कर-लो ।
अवश, अकेला, मूक-अनाश्रित,
थकित जगत से, सदा उपेक्षित ।
युग-युग से आँसू में भीगा,
मेरा शिशु-मन बाँह पसारे ॥

1997

मन-
आँगन
में

• श्याम श्रोत्रिय

समर्पण

यादो के नाम जिन्होंने एकाकी जीने को विवश कर दिया

क्या सम्बोधन करूं तुम्हे कुछ समझ न आता,
कहूँ अगर सर्वाधिक अपना तोष न पाता ।
जीवन के सम्पूर्ण शून्य को भरने वाले,
जनम-जनम के मेरे स्वप्नो के निर्माता ॥
तुम मुझसे तो भिन्न नहीं हो खूब जानता,
'मैं' ही तो 'तुम' तुम ही तो "मैं" हृदय मानता ।
प्राण एक पर गात भिन्न हैं इसीलिए -
गीतो मे तुमको 'तुम' कहना है मन का नाता ॥
मृदु भावों के फूल कहो, जीवन-स्वप्नों के मूल कहो,
बहती श्वाँसों के कूल कहो, मेरी अनजानी भूल कहो ।
स्वीकार करो मेरे अपने, ये प्रीति-भरे दो आँसू-कण ॥
पाया इनको दे उम्र सभी, ले दर्द और खो अपनापन ॥

(1)

यादों का आमन्त्रण तुमको,
गीतों में अमृत छलकाओ ।
अपने पारस मधुर परस-से,
वर्ण-वर्ण को स्वर्ण बनाओ ॥
जनम-जनम तुम रहे प्रतीक्षित,
और अधिक अब मत तरसाओ ।
स्वप्नों की बगिया में आओ,
दर्द-भरी बाँसुरी सुनाओ ॥

(2)

बडा अकेलापन लगता है,
नहीं स्वप्न में जब तुम आते ।
गीतों की सूनी गलियों में,
शब्द सिसकते ही रह जाते ।
यादों की पगडंडी जबतक,
तुम्हें तलाश नहीं कर पाती ।
पनघट पर आकर भी मेरे-
तृषित प्राण प्यासे रह जाते ॥

(3)

और सबकुछ मौन है,
बस घडी टिकटिक कर रही है ।
जेठ की दोपहर मे भी,
चील नभ में उड रही है ।
द्वार-तपते नीम पर-
जब कभी कौआ बोलता है ।
जिन्दगी को थपथपाता,
चाह का रस घोलता है ॥

(4)

सब अँधेरा दूर हो, तुम अगर आओ,
स्वप्न सच हो, रच भर तुम अगर चाहो ।
साँस का यह सफर, बन आसान जाये,
दर्द का श्रृगार गीतो मे सजाओ ॥

(5)

दर्द जो मुझको मिला है गीत मे,
उम्र के उस पार तक भी साथ देगा ।
मैं तुम्हारे ही लिए स्वर-साधता हूँ,
यह तुम्हारे स्वप्न की सौगात देगा ॥

(6)

गीत - का सिरजन तुम्हारी अर्चना है,
शब्द-फूलो से सजाता हूँ इन्हें ।
दर्द मे डूबे हुए जो अश्रु हैं,
अर्घ्यसम उनको चढ़ाता हूँ तुम्हें ॥

(7)

स्वप्नों मे मुझको जब तुम मिल जाते हो,
गीतों को फिर नया दर्द दे जाते हो ।
अधरों को वह खुशी नया स्वर देती है,
देह-दीप मे नया-स्नेह भर देती है ॥
मेरा एकाकी मन तन्मय हो जाता,
यादो की गलियों मे जाकर खो जाता ।
यह क्रम इसी तरह से यदि चलता जाये,
मेरी नैया भी उस पार पहुँच जाये ॥

(8)

न जाने कौन है सुनसान में घुघरू बजाता है,
निपट एकान्त में आकर सदा वह गुनगुनाता है ।
मुझे लगता कि निश्चय वह तुम्हारी मूक-आहट है,
मगर होता नहीं कोई मुझे हर दिन सताता है ॥

(9)

एक अजब दर्द मेरे मन मे समाया है,
मेरे सब गीतो पर उसका ही साया है ।
मेरे अस्तित्व के लिए वह जरूरी है,
उसने हर जनम मेरा साथ भी निभाया है ।।
जिसे पाना है वह हाथ नहीं आता है,
शायद नहीं पाने का इससे कुछ नाता है ।
मेरी हर-धडकन हर-साँस उसे खोजती है,
जन्म-जन्मो से यह खेल चला आता है ।।

(10)

'तुम्हे' प्राण पाने को बहुत बहुत व्याकुल है ।
मन- मे समा लेने को रोम-रोम आकुल है ।
कहाँ कौन कैसे हो यह नहीं जानता मैं,
किन्तु मेरे गीतो के सब कुछ हो, मानता मैं ।।

(11)

न जाने कौन है जो
कल्पना को खूब भाता है ।
मुझे लगता है उससे पूर्व का
कुछ गूढ नाता है ।
कँटीले पथ की सारी चुभन
मै भूल जाता हूँ ।

उसे जब स्वप्न में अपने,
बहुत नजदीक पाता हूँ ।

(12)

भक्षत-फूल और चन्दन से
करते है सब पूजा,
मेरी थाली भरी दर्द-से
और उपाय न दूजा ।
इसी सहारे से तुमको
पाजाने की कोशिश है,
हरदम यही सोचता हूँ
आ दर्द मुझे तू छू जा ।

(13)

मेरे गीतों में प्रतिबिम्बित रूप तुम्हारा,
गीतो से सुरभित है मन का आँगन सारा ।
दर्द भरा हर गीत तुम्हारी ही यादो से,
यादो का ही जीवन को बस एक सहारा ।।

(14)

टूट गया वह सपना मन ने जिसे बुना था,
रूँठ गया सौभाग्य जतन से जिसे चुना था।

छला गया विश्वास, झूठ थे कसमें वादे,
ऐसा निठुर प्रहार कहीं देखा न सुना था ।।

(15)

फिर बहारों से दिशायें हो गईं आबाद,
बन्द पलकों के सपन सब हो गये आजाद।
किन्तु मन मे गूँजती है अनसुनी फरियाद,
दर्द बनकर बह उठी है फिर तुम्हारी याद ।।

(16)

अच्छा साथ निभाया तुमने सपनों के मेहमान हमारे,
भटक रहे तुमसे मिलने को जनम-जनम से प्राण हमारे ।
आँखों मे पाने की आशा, प्यासे अधरों पर अभिलाषा,
रुँधे कण्ठ से तुम्हें बुलाते हैं कबसे ये गान हमारे ।।

(17)

अहा, यादो के आसमान में सजा,
सपनों के राजहसो का मेला ।
सुरभित दिगन्त है नव-ज्योति से भरा,
आई है आज फिर क्रीडा की वेला ।।
शुभ हो मगलमय हो खुशियो का नाच-रग
गीतो का आँचल भरो मानसवासी विहग ।
साँसों को थोडी-सी राहत मिले सफर मे,
प्राणों ने युग-युग से बहुत दर्द झेला ।।

(18)

यादो से सुरभित हैं आँसू
इनका कोष अनन्त है,
जनम-जनम से बहते आये
साक्षी काव्य-दिगन्त है ।
शलभ, पपीहे से, चकोर से
पूछे चाहे जो कोई,
दर्द-भरे इस बियावान मे
पतझर स्वय बसन्त है ॥

(19)

गीतो मैं सचित करली है,
आसू की सौगात तुम्हारी ।
मन-उपवन को सुरभित करती,
अन्तरतम की बात तुम्हारी ॥
दर्द बन गया है हमजोली,
उसकी बाँह पकडली मैंने ।
सपनों मे सच होजाती है,
यादो की बारात तुम्हारी ॥

(20)

उमर की अनजान पगडडी पकड कर,
श्वाँस का यह सफर चलता जा रहा है ।

दूर क्षिति के पार से दीपक तुम्हारा,
चरण को अपनी दिशा दिखला रहा है ।।
किन्तु जग के शूल इतने चुभ रहे हैं,
समर्पण को रक्त-रंजित कर रहे हैं।
क्या पता मंजिल कभी मिल पायेगी भी,
जन्म-जन्मों से यही किस्सा रहा है ।।

(21)

जिन्दगी का तुम चिराग हो,
गीतों मे प्रीति-राग हो ।
उम्र के सुहाग हो तुम्हीं,
तुम्हीं स्वप्न के श्रृंगार हो ।।
श्वाँस के सफर मे साथ दो,
थक चुका हूँ अपना हाथ दो ।
चाहती है धूलि चाह की,
तेरे चरन के साथ-साथ हो ।।

(22)

बढ रहे हैं कदम तुम तक पहुँचने को,
तुम मिलोगे या नहीं, है यह अनिश्चित ।
प्राण-मन प्रतिपल रहेगे लीन तुममे
उम्र की लय पूर्ण गति में यह सुनिश्चित ।।
बाँह थामे गीत की निश्वास मेरे,
विकल अधरो पर व्यथित स्वर साधते हैं ।

युग-युगो से स्वप्न की मनुहार करते,
अश्रुपूरित नयन भी आराधते हैं ।।

(23)

यादों के दर्द को कौन पहचानता,
सपनों के दर्पण को कोई नहीं मानता ।
ओठो के अनबोले गीतो को सुनता कौन,
कौन है जो आँसुओं की पीडा को जानता ।।

(24)

फूलो के बीच जब, वह गुलाब खिलता है,
मौसम ही बदल जाता, पात-पात हिलता है ।
यादो के दीप, जब जलते मजारों पर
गीत जनम लेता है, नया दर्द मिलता है ।।

(25)

एक मुस्कान जिससे, पतझर बसन्त होता ।
रजकण भी छू ले तो, सुरभित दिगन्त होता ।।
उसका प्रतिबिम्ब छाया, स्वर-गन्ध-सपनो पर ।
उसका आह्वान हर-गीत है सँजोता ।।
उसी की तलाश मे हूँ, बैठा नयन-दीप जोये ।
उसका ही दिया दर्द, पलक को भिगोता ।।

(26)

अक्षत फूल और चन्दन से करते हैं सब पूजा ।
मेरे पास दर्द है केवल और उपाय न दूजा ।।
इसे समर्पित करके तुमको पा जाने का मन है ।
अपनाओ या ठुकराओ सम्पूर्ण तुम्हें अर्पण है ।।

(27)

आज तुम्हारे स्वप्न न आये,
ये क्या हो गया ।
लग रहा है ऐसा,
जैसे सब कुछ खो गया ।
फुर्सत निकाल लेते,
कुछ इधर की सोचकर ।
लग रहा है ऐसा,
मन थक गया, फिर रो गया ।

(28)

कहाँ चले गये दिन,
मधुर-छुअनवाले ।
सपनो की बस्ती के
मस्त रखवाले ।।
तेरे जो खुमारी मे,
तरुणाई के सुरभित दिन ।

यादो के पलनो मे
गीतो ने जो पाले ।।

(29)

गीतों की सन्ध्या बेला में, कम्पित यह स्वर-धार समर्पित ।
यादो के पलने मे झूला, यह सपना सुकुमार समर्पित ।।
अर्चन-वन्दन से दीपित, यह श्वाँसों का मधुभार समर्पित ।
मन मे जो तुमने बोये, उन फूलों का यह हार समर्पित ।।

(30)

अपनी भूलो पर पछताता,
अब तो मन सुनसान बना है ।
बीती यादो में उलझा-स्वर,
गीतों का परिधान बना है ।।
पनघट की थी व्यर्थ दिलासा,
मेरा घट प्यासा का प्यासा ।
अब तक का अनजान सफर,
साँसो की विवश थकान बना है ।।

(31)

मन इतना नादान न होता,
जीवन यो सुनसान न होता ।
खो कर चिरविश्वास-आशा,
यों आहत निज सम्मान न होता ।।

सुरभित भोर-साँझ के फूलों से-
पूजा का हार बनाया ।
अर्चन की वेला से पहले ही-
वह तो समूल कुम्हलाया ॥
बिखर गया वह नीड़,
स्वप्न चुन-चुन कर जिसको कभी सजाया ।
श्वाँसों का सम्पूर्ण समर्पण,
व्यर्थ हो गया तुम्हें न भाया ॥

(32)

यादों के उपवन में रहता
मेरा अनुरागी मन,
निश्वासों से सुरभित रहते
मेरे सुखद-सपन ।
मंजुल रूप तुम्हारा
प्राणों को ज्योतित करता है,
रसधारा से हर दिन
मेरा रीता-घट भरता है ॥

(33)

भुला नहीं पाया मेरा मन,
तरुणाई के वे मादक क्षण ।

झिलमिल तारो की वे राते,
चुपके स्वर की मीठी बातें ।
या कि चाँदनी की छाया में,
कसे हुए बाँहो के बन्धन ।।

पावस की रसमयी फुहारे,
शीत-प्रकम्पित वे मनुहारे ।
या कि मधुर-रितु के अलसाये,
ओठों के चिर-परिचित्र कम्पन ।।

आँख मिचौनी करते गिन-गिन,
जाने कहाँ छिपे जा वे दिन ।
प्रणय-सिक्त बोझिल पलको से
ओझल सब हो गये सुख-सपन ।।

(34)

जब कहीं निर्जन मे, बाँसुरिया बोलती ।
साँसो की डोरी पर, अपने स्वर-तोलती ।।
मन कहता है अब, राधिका आयेगी ।
कान्हा की बाँहो में रास-रग घोलती ।।
जादू-भरे क्षण मे, सबकुछ थम जायेगा ।
प्रकृति-पुरुष-नर्तन में, ब्रज-भर बँध जायेगा ।।
यमुना-कछारो की रेती का हर कण तब ।
पावन-स्पर्श कर पारस बन जायेगा ।।

(35)

यादों में जब मन खो जाता,
पल प्रतिपल बोझिल हो जाता ।
सपनों में उलझा-सा जीवन,
व्यथा-भार से भर-भर जाता ॥

विविध रूप-रगों का नर्तन,
भर जाता अन्तर का आँगन ।
सावन के भीगे गीतो का,
मलय-पवन सुधियाँ सहलाता ॥

तारो-भरे गगन के नीचे
कसमो के जो बिरवे सींचे ।
उनकी हरियाली आभा मे,
गीत-विहंग थक-थक सो जाता ॥

कभी नहीं लौटेगे वे क्षण,
जो कसते बाँहो के बन्धन ।
ओठों को चुप करता कोई,
आँसू से तन को नहलाता ॥

स्मृति के आँचल से रक्षित,
प्राणों का दीपक जलता है ।
श्वाँसो का विचलित बनजारा
रुक-रुक फिर आगे बढ जाता ।

(36)

जीवन मे जो रहा अधूरा,
सपनो मे पूरा हो जाता ।
जग के निठुर-कपट से हट मन,
एक नया ससार बसाता ॥
स्वर्गिक रूप-स्पर्श-गन्ध सब,
जहाँ विमोहित करते तन को ।
मन-प्राणों को तृप्त बनाता
ऐसा अमर नेह का नाता ॥

(37)

तुम्हीं हो गीतों का आधार,
गीत मेरे 'स्व' का श्रृगार ।
बसा है मेरे मन-आकाश,
यही बस छोटा-सा ससार ॥

प्राण मे झकृत है वह तान,
अधर पर रचती निज पहचान ।
छेड जाती परिचित मुस्कान,
श्वाँस की सरगम के सब तार ॥

बने जब तक सच्चाई सपन, ।
बुलाई जाये जब तक तपन ।
जलाये आशा का हम दीप,
प्रतीक्षा करते तेरे द्वार ॥

(38)

मन के बहुत निकट तुम मेरे,
जब तक दूरी बनी हुई है ।
प्रतिपल-प्रतिक्षण स्मृतियों में-
संचित पीड़ा घनी हुई है ॥
यही धरोहर है जीवन की,
जो तुमने सौंपी है मुझको ।
यही किरण एकान्त सफर की,
यही संगिनी हर पल-क्षण की ।

(39)

बँधा प्रीति का तार, बजाता साँसों का इकतारा ।
इसी गूँज में रहा गूँजता, मेरा तो जग सारा ॥

कठिन डगर अँधियारा छाया, इसने साथ निभाया ।
इसने मीठा बना दिया, वरना जीवन था खारा ॥

भाग अलग है अपना अपना, किसको क्या मिलता है ।
फूल कोई मुर्झा जाता है, फूल कोई खिलता है ॥

कभी चमकता कभी डूबता, फेरे खाता जाता ।
वश में कभी न रहा, भाग्य का सबका अलग सितारा ॥

अतुलनीय उपहार दिया, तुमने उपकार किया है ।
यही उमर का साथी मेरा, यह जो दर्द दिया है ॥

(40)

गीत मेरे, अर्चना के दीप हैं,
गीत मेरे, वन्दना के गीत हैं ।
प्रीति के स्वर में सजे हैं गीत ये,
मीत मेरे गीत, तेरे गीत हैं ॥
बुन गये हैं गीत में मेरे सपन,
जिन्दगी को दे रहे गति की तपन ।
बस यही अर्जित किया है उम्र ने,
गीत ही, बस गीत ही मेरा सृजन ॥

(41)

प्रतीक्षा कर रहा जैसे कि कोई आ रहा है ।
आ रहा है साथ सपने ला रहा है ॥
याद की पगडण्डियों में झूमता ।
आज फिर से वो मुझे तरसा रहा है ॥

(42)

स्वप्न-देखा चित्र अब भी याद में-
अटका हुआ है ।
प्राण दिनभर आज
उसके साथ ही भटका हुआ है ॥
कभी लगता प्रकट होकर
वह अभी बतियायेगा ।

कभी लगता है हृदय में
सिमट वह छिप जायेगा ॥
शीत की यह धूप कमरे से
निकलकर जा रही है ।
आँसुओ का एक कतरा
पलक पर अटका हुआ है ॥

(43)

कितनी सुखद मृत्यु होगी वह ।
देह भूमिपर पडी हुई हो
अन्तिम-श्वाँस छोडने को हो ।
वक्षस्थल पर, हाथ उठे,
कोमल केशों में उलझ जाये फिर ।
आँखों से झरती हो धारा,
गंगा-जमुना जिन्हे पुकारा ।
और अकेले मैं नितान्त-
फिर दृष्टि उठे, जी भरकर देखूँ,
अमिट रूप की प्यास, बुझालू अपनी अन्तिम बार ॥

(44)

फिर घिर-घिर कर आये बादल,
याद दिलाते व्यथा-पुरानी ।
अलकापुरी-रामगिरि की-
आँसू से भीगी विरह-कहानी ॥

घनगर्जन में छिपी हुई जो,
अन्तर की पीड़ा अनजानी ।
मेरे गीतों को भी बरबस,
पावस में दे जाती वाणी ॥

(45)

कितनी दूर निकल आया मैं,
तुम्हें खोजता चलते-चलते ।
मेरा दिन तो बीत चला है,
थके नही तुम छलते-छलते ॥

छूट गये सब सगी-साथी, छूट गई महफिल की रुनझुन ।
तुम बन गये स्वर्ण मृग मेरे, भटक रहा हूँ मैं तो वन-वन ॥

बिना तुम्हारे मेरा दीपक,
बुझ जायेगा जलते-जलते ॥

सपनो से वे सब दिन भूले, कहाँ गये सावन के झूले ।
मादक था हर गीत तुम्हारा, ऐसा जो हर-मन को छूले ॥

बीती यादो मे उलझाता,
मुझको हर दिन ढलते-ढलते ॥

हर पनघट पर तुम्हें पुकारा, झाँक लिया हर-महल-तिवारा ।
फिरा भटकता तीरथ-तीरथ, मिला नहीं पर साथ तुम्हारा ॥

गुजर गया कारवाँ उमर का,
रहा हाथ मैं मलते-मलते ॥

(46)

मैंने अपने आँसू का भी मोल न जाना ।
लुटा दिया सपनो पर ही अनमोल खजाना ॥
बार-बार जिन कसमों ने था मुझे लुभाया ।
मैंने उनको सच समझा और सच ही माना ॥
बहुत दूर का सफर हो चुका अब तो पूरा ।
सम्भव नहीं लौटना बिछुड़े-गीत सुनाना ॥
सम्भव है बस अब तो यादों में खो जाना ।
सब कुछ खोकर भी क्या मैं सच को पहचाना ॥

(47)

छीन लिया तुमने वह सपना,
जो था मेरा सबसे अपना ।
बहुत-बहुत पछताता है मन,
व्यर्थ हो गया सारा तपना ॥
दोष नहीं तुमको मैं देता,
मैं ही स्वयं नहीं था चेता ।
व्यर्थ हुआ सम्पूर्ण समर्पण,
ओ ! गीतो के निठुर प्रणेता ॥

(48)

हाथो मे जब हाथ लिया था
पहली बार तुम्हारा ।

वह सब सच था, स्वप्न नहीं था
जब मन सब कुछ हारा ॥

माँग भरी जिन हाथो से
फूलो से अजलि ।
भूल नहीं पाये हैं अब तक
पहला परस तुम्हारा ॥

गीतो मे सचित हैं वे क्षण
जो थे तुमने कभी दिये ।
काली उजियाली रातो के
पल जो हमने साथ जिये ॥

शरद शीत की वे अठखेली
और ग्रीष्म के उफ् उच्छ्वास ।
पावस की सब वस्त्र भिगोतीं
मधुर-फुहारों का उपहास ॥

याद अभी तक हैं सब बातें
बीता हर दिन बहुत दुलारा ।
याद अभी तक अन्तरतम को
स्वाद सभी वह मीठा-खारा ॥

(49)

मेरे गीत तुम्हारी पूजा को
ही सर्जित फूल हैं ।

प्रिय के मधुर-परस से सुरभित,
यादों की गंगा से सिंचित ।
शब्द-अर्थ के भावों के-
मीठे चन्दन से हैं चिर-चर्चित ।
और अधिक खिल उठे,
चुभे जीवन में जब-जब शूल हैं ।

(50)

नींद मुझे आ जाये
उससे पहले ही आ जाना ।
पूरे हो श्वाँसों के फेरे
पहले ही आ जाना ॥
जोत बुझे अँधियारा छाये
गाता पंछी चुप हो जाये ।
अन्तर का इकतारा लेकर
बनजारा आगे बढ़ जाये ॥
जनम-जनम की प्रीत-निभाना
पहले ही आ जाना ॥

(51)

कल्पना की बाँह थामे,
अहर्निश है पथ जोहा ।
जन्म-जन्मों के वचन से,
प्राण अब भी है विमोहा ॥

दर्द की जिस ओट मे,
जलता रहा है दीप मनका ।
कह रहा है, दह रहा है,
सह रहा अब भी विछोहा ॥

(52)

सुधियो के रास्ते मे,
कहीं स्वप्न अटका रहा ।
अनगिन तारो के बीच,
मनपछी भटका रहा ॥
खटका रहा पल-पल
किसी के चले आने का ।
गीतो की मजिल का-
कारवा भी अटका रहा ॥

(53)

गीत तुम्हारा मैंने गाया,
आँसू झलक पडे थे ।
सच कहूँ क्या पलक
तुम्हारे भी सुन छलक पडे थे ॥
पिरो उमर के धागों मे,
जो याद सजा रखली है ।
उसकी बाँह पकड बेबस स्वर,
छल-छल बरस पडे थे ॥

बेसुध नैन खोजते तुमको,
नहीं कभी-भी थकते ।
भर-भर आ जाते हैं जल-कण,
नहीं रूप से छकते ॥

चित्र तुम्हारा देख-देख कर,
उमर बीत जायेगी ।
अच्छा है, अब सपनो में भी,
नहीं कभी तुम झँकते ॥

(54)

तारों को आमन्त्रण देता,
सूरज डूब रहा है ।
बिना तुम्हारे, यादो मे-
डूबा-मन ऊब रहा है ॥

नभ पर चाँद चला आयेगा,
फिर मुझको वह तरसायेगा ।
पर सब कुछ सहना ही होगा,
अब तक खूब सहा है ॥

(55)

गीतो को पहनाते,
शब्दो के पुष्पहार ।

झंकृत कर देते हो,
सासो के तार-तार ॥
स्वप्नो के पलनो मे,
मन को देते दुलार ।
तुम ही, बस तुम ही हो,
प्राणो के चिर-श्रृंगार ॥

(56)

मेरे मन में सोया हुआ,
कुछ-कुछ जब जगता है ।
लिखता बस लिखता हूँ,
पता नहीं लगता है ॥
अच्छा या बुरा कोई,
चाहे कहे या न कहे, ।
लिखने से मन का मेरे
अँधेरा तो भगता है ॥

(57)

विश्वासों के साथ बदलते,
अपनी-अपनी पूजा के क्रम ।
नाते-नेह बदलते रहते,
रूप बदलते हैं घर-आँगन ॥

स्थिर कहाँ उमर-भर यौवन,
शाश्वत नहीं अगन या चन्दन ।
बँधे रहे हैं, बँधे रहेंगे,
बँधे हुए जो मन के बन्धन ॥

(58)

तुम आओ तो स्वप्न हरे हों,
खोटे मेरे गीत, खरे हों ।
भरे-नयन हों, मेरी राहों पर-
प्रिय तेरे चरण धरे हों ॥

(59)

लुक छिप जाते वचन बेचारे,
आँसू मन का भेद खोलते ।
आशा और निराशा के-
पलड़ों पर जीवन-स्वप्न तोलते ॥
नभ में ज्यों घिर आते बादल,
आँखों में भी घिरते ।
वे बरसा जाते हैं जल-कण,
ये मोती बन झरते ॥

वाणी जब थक जायेगी,
आँसू से गीत लिखूंगा ।
मिलन विछोह भरे मनके-
सपनों से शब्द चुनूंगा ॥
वाणी से जो कहा न जाये,
आँसू कह जाते हैं ।
मन के और नयन के
आँसू से गहरे नाते हैं ॥

(60)

स्वर्णरूप-मासलता ने तो,
बार-बार मन भरमाया है ।
छिपा नहीं पर कभी किसी से,
सबको दाग नजर आया है ॥
काली उजियाली रातों में,
सपनों की बारात सजाई ।
क्या होता है इससे, पूरा -
कभी न होता मनभाया है ॥

(61)

रात सपन मे उन्हे निहारा
मन का कितना बोझ हटा ।

बार-बार तन ऐसा झूमा,
सचमुच कितना सोच घटा ॥
अब कब वह क्षण फिर आयेगा,
बिछुडे-छोर मिला जायेगा ।
गीतो का घन बरसायेगा,
प्राणो मे रसमयी छटा ॥

(62)

कैसा यह एकाकी जीवन,
बिना तुम्हारे सूना तन-मन ।
युग-युग से जल रहे तुम्हारे –
स्वागत मे दो नयन दीप-बन ॥
कितने हार बनाये मैंने,
गीतो के उपवन से चुन-चुन ।
पहना पाऊगा मैं तुमको,
ना जाने कब आयें वे क्षण ॥

(63)

लिख न पाया आज कोई गीत मैं,
चिर तपन की याद मे, मनमीत मैं ।
आँख भर आई, सपन मे भी जुदाई,
रीत यह कैसी अनोखी प्रीत में ॥

(64)

सपनों में आकर मन को हरषाने वाले,
बोलो तुम कब आओगे तरसाने वाले।
दीप जलाये यादों का बैठे हैं कब से,
प्राणों में गीतों के घन बरसाने वाले॥

(65)

बिना तुम्हारे यह उदास मन।
यादों के झरने के तट पर,
व्यथित हो रहा लहरें गिन-गिन।
ऊपर सूना नभ, नीचे गहरी-गहराई,
साथ नहीं कोई बस फैला-फैला निर्जन॥

धूमिल होते स्वप्न भटकते,
हैं क्षण-प्रतिक्षण।
कितने जनम बिताये मैंने
इसी तरह से
तुम मिल जाते तो
पूरा हो जाता वन्दन॥

(66)

विश्वासों का दीप जलाये,
बैठे हैं तुम आओगे।

आशा के आँगन मे सपनो के
सब फूल खिलाओगे ॥

बिखरा दिया उमर का आँचल,
बाट जोहते प्रति-पल-प्रतिक्षण ।
गन्ध-रूप-रस उलझे प्राणो को
तुम कब मिल पाओगे ॥

आओ हे ! आओ आ जाओ,
ये अन्तिम मनुहार निभाओ ।
दूर देश उडगया पखेरू,
गीत न फिर सुन पाओगे ॥

(67)

मैं अपना मन रोक न पाया,
मुझे छोड हो गया पराया ।
कहते हैं कुछ खोकर ही-
जग में कुछ पाया जा सकता है ।
किन्तु खो गया मेरा सब कुछ,
मेरे कुछ भी हाथ न आया ॥

अपने दीपक से जग भर में,
रहा बाँटता मैं उजियाला ।
किन्तु स्वय के अन्धकार को अपने-
तल से भगा न पाया ॥

मैंने जगभर को सुरभित कर,
सारी पखुरिया बिखराईं ।
ऐसी डाल मिली मुझको-
जिसने प्राणो मे शूल चुभाया ॥

अपनी सारी खुशियाँ मैंने,
बिखरादीं थी जिस आँगन मे ।
ऐसी क्या थी भूल कि उसने,
छलकर बारम्बार रुलाया ॥

(68)

नैन पथराये पर तुम-
तो नहीं आये ।
अब जीवन पर छाये हैं,
सन्ध्या के साये ॥
शूल चुभे, पाँव थके,
तुम तक ना पहुँच सके ।
काश ! तुम आते, अपनाते,
मान नेह-नाते ॥

(69)

बड़ा कठिन है बिना तुम्हारे-
जीवन जीना ।

दर्द दिया है जो तुमने
उसको हँसकर पीना ॥
पल-पल छिन-छिन बाट-जोहता,
दीपक मुरझ रहा ।
ऐसा लगता दुर्दिन ने,
मेरा सब कुछ छीना ॥

(70)

मुझे सुखद हैं स्वप्न तुम्हारे
सपनो के ही गीत लिखूंगा,
गीत सजाकर अधरो पर
मैं तो जग मे बेमोल बिकूंगा ।
तुम रूठो चाहे मुस्काओ
मौन रहो, चाहे सग गाओ,
यह मेरा अर्चन-वन्दन है
इससे कैसे विरत रहूँगा ॥

(71)

एक बियावान सुनसान,
बेजुबान सा-
लक्ष्यहीन, अर्थहीन
रह गया रे जीवन ॥

स्मृति का पाहुन बनकर
चिडाता है-
विगत का हरदिन,
बीता हुआ हरक्षण ॥

प्रतीक्षा का सुख भी-
एक अजब सुख है ।
धीरज से बँधा हुआ-
रहता है चिन्तन ॥

हर पल ध्यान में यों-
बसा कोई रहता है ।
आशा-विश्वास का ज्यों-
बँधा हुआ बन्धन ॥

(72)

मैं अपना मन जीत न पाया,
बार-बार ही मुझे हराया ।
था जो विष अमृत-सा जाना,
लुटा सभी कुछ तब पछताया ॥

छला गया विश्वास प्रीत का,
मेरे हाथ न कुछ भी आया ।
बिखर गया जो नीड सजाया,
अपना सब कुछ सहज गँवाया ॥

मृदुल परस ने यों भरमाया,
मखमल पर रख पैर जलाया ।
उलझ गये सब गणित उमर के,
छलती रही मुझे ही छाया ॥

(73)

यदि बीते दिन वापस आते,
मन के फूल न यों कुम्हलाते ।
जीवन के सब स्वप्न अधूरे,
शायद फिर पूरे हो जाते ॥
युग-युग प्यासी उमर अकेली,
इन्तजार में यूं न बिताते ।
अगर गये दिन फिर आ जाते,
मेरे गीत मुखर हो जाते ॥

(74)

क्या हो तुम, मन समझ न पाया,
सर्व समर्पण तुम्हें न भाया ।
प्रीति-भरे प्राणों की-
चिर पुकार को भी तुमने ठुकराया ॥
यादों में दिन रात बसे हो
फिर भी नयनों से ओझल हो ।
जनम-जनम में तरसाने का,
तुमने क्यों यह खेल बनाया ॥

(75)

जब-जब यादो मे तुम आते,
मुझको बहुत अधीर बनाते ।
अश्रु-नीर गगा-जल बनता,
जिसमे तन-मन खूब नहाते ।
पलको पर दीपक सजते हैं,
ओठो पर गुलाब खिल जाते ।
तुम ही तो मेरे अपने हो,
मेरे मनचाहे सपने हो ।
पल-क्षण चन्दन-सदृश महकते,
जब तुम स्मृति मे छा जाते ।

(76)

बोलो तो तुम कब आओगे,
प्राणो में मधु-बरसाओगे ।
विश्वासो का दीप जल रहा,
आओगे तुम, सच आओगे ?

(77)

भेज रहा हू गीत तुम्हे
जीवन की मधुप्रीत तुम्हें ।
थकते प्राण बुलाते है
ओ मेरे मनमीत तुम्हें ।

(78)

शमा तो दग्ध करती है
पतंगा प्यार पर करता,
पवन है पुष्प छितराती
मगर सद्गन्ध वह झरता ।
अनोखी रीति जग में-
प्रीति की चलती चली आई,
दरद जब एक देता
दूसरा बस प्यार है करता ॥

(79)

आज तुम्हारी याद बहुत बेचैन कर रही,
स्वप्न-थकित पलकों पर चुन-चुन अश्रु धर रही ।
याद तुम्हे भी आई होगी मुझे लग रहा,
फिर व्यतीत की बात आज मदहोश कर रही ॥

(80)

चित्रलिखी नीरवता-सी छा रही है,
दीपशिखा ज्योति-कण बरसा रही है ।
सारा जग सोता है, सुख को सँजोता है,
गीतों का कारवाँ, मन को भिगोता है ।
शब्द और सपनों का रस-रास रचती,
बेसुध-सी लेखनी न रुक पारही है ।

(81)

जिसे समझा था अपना वह अपना न था ।
कभी पूरा हो पाता वह सपना न था ॥
जिस लिए तन तपाया, स्वय को छकाया ।
सभी कुछ गँवाया, वो अपना न था ॥

(82)

बीती हुई जिन्दगी रह-रह कर याद आती है ।
तुम्हे भी, कहो क्या यूँ ही तडपाती है ॥
वे अपने दिन, वे अपनी राते ।
रूँठने-मनाने की वे सब बाते ॥
सच कहना, सच-सच कहना-
क्या आँखों से चुपके से बही चली जाती हैं ॥

(83)

न आओ निष्ठुर तुम पास मेरे,
सपनो मे भी न आओ तो जानूँ ।
सतालो जितना सताना है मुझको,
मन से भी तुम चले जाओ तो मानूँ ॥

(84)

तुम तो महान मेरे, मैं सचमुच छोटा ।
तुम हो उज्ज्वल खरे, मैं बहुत खोटा ॥
पर तुम मिल जाओ तो जनम सफल हो जाये ।
पारस छू जाये तो लोह स्वर्ण हो जाये ॥

(85)

तुम्हारे ये आँसू मेरे मन को भिगोते हैं ।
बडे कीमती हैं, इन्हे यूँ ही नहीं खोते हैं ॥
कई जन्म लेकर भी चुकता नहीं इनका मोल ।
उमर कट जाती है जब ये साथ होते हैं ॥

(86)

दो नयनो के मेघ बरसते,
फिर भी प्यासे-प्राण तरसते ।
ना जाने तुम कब आओगे,
उजडे हम तो बसते-बसते ॥

(87)

कल्पना में मिल जाने से भी,
सन्तोष मिलता है ।
खोई सुध लौट आती है,
कुछ होश मिलता है ॥

किन्तु सपना टूटते ही,
दूरी अनन्त होती है ।
क्षणभर मे लुट जाता है,
जो खुशी का कोष मिलता है ॥

(88)

कहीं मिलेगा ऐसा जिसने--
अपने मन को स्वय छला हो ।
ऐसा भी होगा क्या कोई,
कूद आग में स्वय जला हो ॥
मेरे विश्वासी अन्तर ने,
अपने 'स्व' को भुला दिया रे ।
व्यर्थ मगन रहकर सपनो मे,
चिर यथार्थ से भटक चला जो ॥

(89)

ओ मेरे विश्वासी मन,
अब पछतावा होने से क्या।
जो बीत गई सो बात गई,
अब दुखियाने रोने से क्या ॥
फलने का मौसम निकल गया,
अब सुखद सपन बोने से क्या ।
जब लुटा दिया सर्वस्व स्वय,
फिर अब अधीर होने से क्या ॥

(90)

बसा हुआ है मेरे मन मे,
सपनो का सुरभित ससार ।
जन्म-जन्म से इन सपनो से,
गुँथा हुआ गीतो का हार ॥

गीतो से झकृत तारो मे,
गूँज रहे वे स्वर अनजान ।
जिनमे हर मौसम हर रितु मे,
बहती रहती है रसधार ॥

स्वर की सुखमय गोद मुझे,
देती है ऐसा मृदुल-दुलार ।
जिसमे समा रहा जग-भर का,
पावन अनुपम निश्छल प्यार ॥

बिना तुम्हारे व्यर्थ किन्तु सब,
ओ मेरे प्राणो के प्राण ।
बिना तुम्हारे मदिर-स्पर्श के,
सारा जीवन है निस्सार ॥

(91)

युग युग से जलता है दीपक,
मूक व्यथा की कथा सुनाता ।
युग युग से सुनते हैं सब पर –
कोई नहीं मर्म को पाता ॥

उधर विरह की ज्वाला मे,
जलता पतग सिर धुन-पछताता ।
जनम-जनम से महामिलन की-
कोशिश मे फिर-फिर जल जाता ॥

(92)

यादो की छाँह मे बस सफर कट जाये ।
पूरी हो अभिलाषा मन का तम हट जाये ॥
बीते वे लमहे तो आज तलक चुभते हैं ।
ये चुभन साथ चले, किञ्चित न घट जाये ॥

(93)

आशा की डोर विश्वासो को खींच रही ।
इस पार नहीं शायद उस पार पाजाओ ॥
साँसो के तार-तार लगातार गूँज रहे ।
इस पार नहीं साथ उस पार आ जाओ ॥

(94)

किसे है पता दीप किस वक्त बुझ जाये ।
ज्ञात है किसे गीत मूक कब बन जाये ॥
चाह के प्रवाह मे अब भी भरम है कि-
मन का मीत मिल जाये और बात बन जाये ॥

(95)

आस्था का दीप अभी बुझा नहीं जल रहा है ।
थकता हुआ साँसो का कारवाँ भी चल रहा है ।।
पल रहा है स्वप्न अभी आश भरी पलको मे ।
आजाओ अन्तिम महूरत भी टल रहा है ।।

(96)

सुरभि भरी बसन्त की बहार भी चली गई ।
पावस की रेशमी फुहार भी सिमट गई ।।
मिट गई शरद और शिशिर की सुरग छाप ।
चाह की पुकार किन्तु बार-बार छली गई ।।

(97)

नैन पथराये, नहीं आये तुम, बाट जोई ।
मन का घट रीता है और नहीं घाट कोई ।।
रस-रग दुनियाँ के दाहक से बने मीत ।
तेरे बिना महफिल मे भाया नहीं गाठ कोई ।।

(98)

गीतो के उत्सव मे याद बहुत आये तुम ।
ओठों के हर स्वर मे दर्द बन छाये तुम '
आँखो के दर्पण में प्यारी छवि बिखरी है ,
महफिल मे मगर कहीं नहीं नजर आये तुम ।।

(99)

रात का अँधेरा अब बढता ही जा रहा ।
दीपो का मेला भी बिखर गया सो गया ।।
एक स्वर फिर भी तुम्हारे लिए गाता रहा ।
तुम नहीं आये मन अन्तिम बार रो गया ।।

(100)

फूल सब झर चुके, शीश धूलि धर चुके ।
बिखर गये, मौसम का आँचल भी न भर सके ।।
सुरभि सब हवा हुई, रंग-रूप मिट चुके ।
तुम न मिले मीत, स्वप्न भी नहीं सँवर सके ।।

(101)

गीतो का तीसरा प्रहर बीत रहा मीत ।
रीती सी शाम भी क्या यूँही चली जायेगी ।।
रात के अँधेरे मे कैसे तुम्हे पाऊगा ।
दिन ने तरसाया अब रात भी तरसायेगी ।।

(102)

साँस साथ छोड चले, धडकन भी थक जाये ।
रोम-रोम दगा दे पर नयन बन्द मत होना ।।
आग की सवारी कर जाना है दूर शायद-
सफर सुखद हो जाये मीत नजर आ जाये ।।

(103)

नश्वर देह धरे प्राणों ने कितनी बार पुकारा ।
मिले नहीं हर बार और मैं जनम-जनम मे हारा ।।
पता नहीं कब तलक चलेगा ऐसा खेल तुम्हारा ।
पता नहीं कब तक टूटेगी साँसो की यह कारा ।।

(105)

कैसी दी है पीर मुझे ये बेसुध प्राण भटकते ।
दुनियाँ के दस्तूर मुझे क्यो बारम्बार हटकते ।।
बिना तुम्हारे व्यर्थ जिन्दगी पूजा या रसधारा ।
बिना तुम्हारे गीतो की गगा का जल भी खारा ।।

दीप-शिखा की स्वर्णप्रभा में पुलकित प्राण पले ।
जनम-जनम तक अमित-स्नेह से शवलित दीप जले ।।
मन-दीपक स्मृति की बाती सुख-स्वप्नों पर ज्योति जगाती ।
अपने जीवन-भर की साथी अपने साथ चले ।।

जाग-जाग भारती

(विविधा)

• श्याम श्रोत्रिय

समर्पण

मातृभूमि की स्वतन्त्रता-हित,
तुमने सब कुछ वार दिया ।
मिटा दिया अस्तित्व स्वयं का
न्यौछावर घरबार किया ।।

फाँसी के फन्दे को हँसकर,
हार गले का माना ।
मोल चुकाया माटी का
पहना केसरिया बाना ।।

रक्त सनी संगीने अब तक
कहतीं अमर कहानी ।
नहीं झुकाया शीश
लुटादी अपनी मस्त-जवानी ।।

अपने लोहू से सींचा,
आजादी के तृण-तृण को ।
कुंकुम-सा पावन बना दिया-
था धरती के कण-कण को ।।

राष्ट्रभक्ति से प्राजल
स्मृति-गीतो का यह हार ।
तुम्हे समर्पित अमर शहीदो,
इसे करो स्वीकार ।।

जाग-जाग भारती- विविधा

सन्दर्भ

देशभक्ति और राष्ट्रीयता की प्रेरणा देने वाले उन गुरुजनो के प्रति मन आज भी श्रद्धा से अभिभूत हो जाता है जिन्होने स्वतन्त्रता प्राप्ति के उन संघर्षशील वर्षो मे शिक्षा दी थी । श्री चम्पा अग्रवाल इण्टर कालेज मथुरा का राष्ट्रीय जागृति से आन्दोलित वातावरण जहाँ किशोर और तरुण छात्र आजादी के दीवाने बने हुए थे । गुरुवर डॉ० सत्येन्द्र जगदीश शरण अग्रवाल महेन्द्रप्रताप वार्ष्णेय डा० नारायण दत्त शर्मा मदन मोहन गुप्त शर्मन लाल अग्रवाल फतेहबहादुर सक्सेना डॉ० सीताराम कपूर जैसे देशभक्त आचार्यों की पूरी टोली का हम विद्यार्थियो को आशीवाद प्राप्त था । गुरुवर डॉ० सत्येन्द्र (जो बाद मे राजस्थान विश्वविद्यालय मे हिन्दी विभाग के अध्यक्ष बने) के ओजस्वी भाषण छात्रो मे राष्ट्रीय जागरण का शख फूँक देते थे ।

आज भी स्मरण है १६४२ के वे दिन जब अंग्रेजो भारत छोडो आन्दोलन चल रहा था । केसरिया वस्त्र पहनकर हम छात्रगण तिरगा फूल जेब पर लगाये शोभायात्रा मे सम्मिलित होते थे । हमारे नारे थे अंग्रेजो भारत छोडो' हिन्दू–मुस्लिम एक हो ।

छात्र जीवन के उन सस्कारो ने देशभक्ति पूर्ण गीत लिखने के लिए भावभूमि प्रदान की । 'गई गुलामी जागी धरती जागा हिन्दुस्तान 'तुम कहते नव दीप जल गय आदि गीत कालज जीवन म ही लिखे गये थे ।

१९५२ से शिक्षक जीवन आरम्भ करने पर साहित्यिक-सास्कृतिक कार्यक्रमो के सचालन का अवसर मिला तो ऐसे अनेक गीता का सृजन हुआ जो छात्रो मे खूब प्रचलित हुए और मचीय कार्यक्रमो मे पुरस्कृत हुए ।

'मुक्ति दीप की ज्योति अमर देश के सपूत ओ 'देश के तरुण उठो' जागो रे धरती हेलो देवै आदि देशभक्ति पूर्ण गीतो को छात्रो ने तन्मयता से अपनाया । ये गीत लाडनू, सुजानगढ डीडवाना ओर नागौर के क्षेत्र मे विशेष रूप से प्रचलित हुए । सास्कृतिक मचो पर आज भी इनमे से अनेक गीत एकल अथवा सामूहिक गीत के रूप म प्रस्तुत किये जाते हैं ।

इन गीतो मे राष्ट्रीय दिवसो १५ अगस्त और २६ जनवरी पर उपयोग मे आने वाले गीत भी सम्मिलित हैं तथा ध्वज-वन्दन और नववर्ष के स्वागत गीत भी हैं । इनमे ऐसे गीत भी हैं जो आकाशवाणी से प्रसारित हुए हैं ओर श्रोताओं द्वारा पसन्द किये गये हैं ।

विद्यालयो मे राष्ट्रीय पर्वो पर और उत्सव-आयोजनो के अवसर पर देश भक्ति पूर्ण नवीन गीतो की तलाश होती है । प्रस्तुत सग्रह के गीत इस आवश्यकता की पूर्ति कर सकते हैं ।

छात्रो मे राष्ट्रीय भावना और देशभक्ति उत्पन्न कर सके इसी कामना के साथ किशोर और तरुणो के लिये प्रस्तुत हैं (सन् १९५० से १९६६ तक के) जाग जाग भारती के ये गीत इसके साथ ही विविधा के अन्तर्गत कुछ उन्मुक्त-शेली की रचनाय भी सम्मिलित की जारही हैं ।

● श्याम श्रोत्रिय

प्रेमचन्द जयन्ती पर

कथा सरित-सागर की लहरे
गाती तेरी अमर कहानी।
आज किसी के प्रेमाचल से-
उडती आती याद सुहानी,

चित्रकार ने कुशल तूलिका से
जीवन के रग बिखराये।
मानवता चमकाने को सहसा
अपने नवरस नीर बहाये।
पुलक उठे अन्तर-अन्तर से
सजल-सरल से भाव जगाये।

आज जयन्ती जाग रही है
जाग रही फिर तेरी वाणी।
आज किसी के प्रेमाचल से
उडती आती याद सुहानी

भारतीय - आदर्श-पुजारी
कला-भवन मे दीप जलाये।
निकली धूलि भरी भय-ऑधी
सबल करो से लडता आया

रही नागरी अंक सँजोती
रुक न सका आँखो का पानी,
याद तेरी बस याद रह गई
याद रहे वह बात पुरानी ।

मेरी हिन्दी के आराधक
तेरी स्मृति की प्रतिमा पर,
कैसे अर्चन-फूल चढाऊ
मन-उपवन की हरीतिमा पर ।
शेष इसे ठुकरा मत देना
मौन बनी जाती है वाणी ।
आज किसी के प्रेमाचल मे
उडती आती याद सुहानी ।

1950

एक सिपाही नई कलम का जिसने अलख जगाया ।
तोड़ किलेबन्दी भाषा की नया रग दिखलाया ।।
दे पारस-स्पर्श कहानी को जीवन्त बनाया ।
क्रान्तिदूत बन उपन्यास का वह सम्राट कहाया ।
श्रद्धानत है आज भी सारा मुल्क-जहान ।
था वह चिन्तन जगत का प्रगतिशील इन्सान ।।

जागी तो है मुक्ति प्रभाली

उम्मीदो का रग उड गया, अरमानो की सजी न डोली,
जागी तो है मुक्ति प्रभाली, फिर भी रोतीं ऑखे भोली ।

तुम कहते नवदीप जल गये
रूपकिरण के रग बुलाते,
ना जाने मेरी आशा के
दीपक क्यो बुझते ही जाते ।
किरणराजि ने अन्धकार मे जाने क्यो बिखरादी झोली ।
जागी तो है मुक्ति प्रभाली, फिर भी रोतीं ऑखे भोली ।।

नये सृजन-रथ आज सजाते
नव विकास के स्वर्णांचल मे,
क्षुधा-कसक पीडा का डेरा
उधर पडा है विस्तृत थल मे ।
शोषण की खूनी ज्वाला में जलती लोकतन्त्र की होली ।
जागी तो है मुक्ति प्रभाली फिर भी रोतीं ऑखे भोली ।।

रक्त ज्वार औ' उष्ण श्वास मे
छिपी हुई विप्लव चिन्गारी,
शकित है मन कहीं ढहादे ना-
सपनों के महल-तिवारी ।
सावधान ! बटमार लूटने खडे हुए दुल्हिन की डोली ।
जागी तो है मुक्ति प्रभाली, फिर भी रोतीं ऑखे भोली ।।

1951

●

आ गया बसन्त

कली खिली लजा उठी
अधीर-पीर गा उठी,
बिखर गया पराग
रागिनी उठी विहागिनी ।

नवीन तूलिका लिये
प्रभात ने सजा लिये,
नवीन चित्र ये विचित्र
भूमि पर नये-नये ।

गा रहा विहग-बाल
डाल पर प्रवीण राग,
झूमती लुटा रही है-
गीत ये लता प्रवाल ।

स्वर्णधूलि सी बिखेरता है
विहँसता अनन्त,
पुलक भर पुकारती
पवन कि आ गया बसन्त ॥

कोपलों के गाल पर
है रंग लाल छा गया,
हरीतिमा-विभोर स्वप्न
बाँसुरी बजा गया ।

गुनगुना रहे भ्रमर
थिरक रही पुहुप परी,
पियो पराग मुक्त
खोलती है वक्ष पखुरी ।

पीत पुष्प ने सभीत
शीशा जो उठा लिया,
चल उठे शलभ
कि जल उठा नया-नया दिया ।

झर रहा है नीर
निर्झरी झुला रही दिगन्त,
झूमती मधुर तरंग
लो ये आ गया बसन्त ।।

हँस उठी प्रभामयी मही
सुपीत पुष्प-पुष्प,
खिलखिला रहे अनन्त
वृन्त-पर नये-नये ।

नील-श्वेत, पीत-श्वेत
रक्तवर्ण, बैंगनी,
गुलाब मौन प्राण में
छिपा रहा नई हँसी ।

आम्रबौर ठौर-ठौर
खिल रहा महक-महक
कुंज-कुंज कूजता
पपीहरा चहक-चहक ।

नाचती नई कली
अधीर हो रहा है वृन्त,
कोकिला पुकारती कि
लो ये आगया बसन्त ।

प्राण-प्राण मे नवीन
गन्ध छोडता अनग,
श्वाँस-श्वाँस मे मिलन
सहेजता नवीन रग ।

आँख-आँख मे छलक उठा
सनेह स्वप्न-मीत,
गा उठा अधर-अधर
मधुर-मधुर नवीन गीत ।

प्रीति-की मदिर-फुहार मे
निमग्न गात-गात,
तृण-तृण मे जीवन
जगा रहा है मलयवात ।

जगती का कण-कण
है बन गया स्वरूपवन्त,
धरणि-गगन बिहँस उठे
लो ये आगया बसन्त ।।

1952

●

कहीं न सुख का स्वर सुन पाता

कहीं न सुख का स्वर सुन पाता ।
मन का ज्वार उमड नयनो से
चुपके-चुपके बहता जाता ।।

प्राणो की सोई अभिलाषा
पाती बारम्बार निराशा
क्षुधा-तृषित, पीडित जन-जीवन
मन की सोई पीर जगाता ।
कहीं न सुख का स्वर सुन पाता ।।

वसन बिना मेहनतकश बाँहे
थकती जाती भीगी-आहे,
उजडी, सूनी-सी कुटियो का
बुझता-दीपक शीश-झुकाता ।
कहीं न सुख का स्वर सुन पाता ।।

सन्तानो को सुखी बनाने
आज चला है स्वर्ण उगाने
भूखा पर धरती का बेटा
श्रम से भू को सींच न पाता ।
कहीं न सुख का स्वर सुन पाता ।।

1952

●

जा रही सध्या गगन मे

पार जाती नाव नभ मे
आज आधे चाँद की ये,
बादलो की उर्मियो मे
डुबकियाँ लेती किरण हैं ।
जा रही सध्या गगन में ।।

बह चले लो दीप नभ मे
जल उठे लो दीप जग मे,
डालते कम्पित भुजाये
जा रहे हैं द्रुम पवन मे ।
जा रही सध्या गगन में ।।

ये शिशिर का अन्त है अलि
जाग-जाग बसन्त है कलि,
ढप बजाते दूर गाते
दिवस के विश्रान्त जन हैं ।
जा रही सध्या गगन मे ।।

1953



जागा हिन्दुस्तान

गई गुलामी जागी धरती जागा हिन्दुस्तान
तुम भी जागो तुम महान हो भारत के कृषिवान ।
तुम्हारा ही यह देश महान ।

सिर पर जल का भार लिये
सागर अपरम्पार लिये,
बाट जोहता बादल प्रतिपल
कब तुम उठो किसान ।
कृषक तुम हो भू के भगवान ।

सोना-चाँदी सुख-श्रृंगार
यहीं मिलेगी शान्ति अपार,
जागो खोलो द्वार धरा के
गाओ मंगल गान ।
इसी में है भारत की शान ।

नई जिन्दगी जाग रही
जमीं पसीना माँग रही,
नया बनाना हमको भारत
आओ दें श्रमदान ।
नहीं लेना तब तक विश्राम ।

आगे चल दी दुनियाँ आज
हमको भी अपनी है लाज
सुनो-सुनो आवाज विश्व की
मंजिल लो पहचान ।
तुम्हे भी रखनी अपनी शान ।

1954

नया दिनकर

मेरी धरती के गीतो पर नवस्वर-धर
नवल ज्योति से जन-गण-मन का वन्दन कर,
सूने-प्राणो मे श्वॉसो का भर सागर
उठता-उठता-उठता आता है दिनकर ।

सूनी कुटियो मे फिर से गूजी ताने
बुझते-बुझते अरमानो की पहचाने,
छिपती-राहो पर उजियाला दलकाता
सोना-बरसाता दिनकर उठता-जाता ।

फूलो पर शबनम बनकर, हर रोज खिले
पथराई बेबस ऑंखो से चू न पड़ें,
चुप-चुप-सी मजबूर निगाहो के ऑसू
बुझते-दीपो की लौ बनकर प्रीत करें ।

टूटे-टूटे सपनो को फिर चुन-चुनकर
पूरा करता उठता आता है दिनकर ।

हनुमान-अर्जुन-हर-लक्ष्मण - भीमबली
राम-कृष्ण की हुकारे फिर से आती,
पापी कसासुर, दुर्योधन सँभलो तुम
नाव तुम्हारे पापों की डूबी जाती ।

उलझे-उलझे तारो को फिर सुलझाता
चुपके-चुपके आज कबीरा फिर गाता,
मीरा-तुलसी-सूर-जायसी के स्वर फिर
उठते आते हैं वीणा के तारो पर ।

गीता-गौतम की वाणी आती घिर-घिर
उठता-उठता-उठता आता है दिनकर ।

महलो की नींवों के नीचे आहे भर
करवट लेती है मेरी सोई धरती,
रह न सकेगी अत्याचारी मीनारे,
भूखे तन की सिसकी हैं आहे भरती ।

अब आजाद जवानी कैद नहीं होगी
अब असहाय बुढापा कभी न रोयेगा,
रोटी के टुकडे को रोता ये बचपन
भीगी-भीगी ऑखे ले ना सोयेगा ।

मिट्टी की उच्छ्वासो से फिर गीत उठे
उठता-उठता-उठता आता है दिनकर ।

हर डाली पर नये कुसुम खिलने को हैं
हर झुरमुट मे पछी बैठा बोलेगा,
रोजी-दाने की चिन्ता मे घुट-घुटकर
सूनी कुटिया मे ना कोई डोलेगा ।

नई नींव पर नई भींत उठती जाती
नया-नया अपना घर है बनता जाता,
नई-नई पत्ती डालो पर लहराती
नई-नई हरियाली खेतो पर आती ।

उम्मीदो के छोटे-छोटे अँखुओ पर
खुशहाली बरसाता आता है दिनकर ।

मेरी धरती के गीतो पर नव-स्वर-धर
उठता-उठता-उठता आता है दिनकर ॥

1954

मानवता को शुभ-संस्कृति का पाठ पढ़ाया ।
वेदों की ध्वनि-पूत ऋचाओ को जब गाया ॥
मनहर षटऋतुओं का है यह देश दुलारा ।
प्रचुर सम्पदा खनिजों का भंडार हमारा ॥
विविध कलाओं का यहाँ प्रथम हुआ विस्तार ।
दुर्लभ रत्नों का यहाँ विस्तृत है आगार ॥

ध्वज वन्दन

वन्दन शत-शत बार
अमर है वीरो के बलिदान !
लहर-लहर तू नीलाम्बर मे
हे राष्ट्रीय निशान !

सत्य-अहिंसा के उजियारे
विश्वासो के सजग सहारे
न्याय-दया से पूरित प्यारे
भारत-भाग्य - विधान !
अमर है वीरो के बलिदान !

इस धरती के कण-कण सारे
तेरी गुरुता पर बलिहारे,
दिव्य स्वप्न साकार हमारे
जन्मभूमि के प्राण !
अमर है वीरो के बलिदान !

युग-युग तक लहराता जाये
मुक्ति-दिवस की कथा सुनाये,
शान्ति-प्रेम-सुखमय हो गाये
जनगण मगलगान !
अमर है वीरो के बलिदान !

1955

स्वतन्त्रता संघर्ष की याद में

बलिदानों-विश्वासों की इस धरती पर
नये दीप जलते जाते दुनियाँ वालो ।
ये सोने का देश नया बनता जाता
नई रोशनी देते अम्बर के तारे ।

उस दिन दिनकर उठा नई आभा लेकर
आजादी की बेबस आशा फूट पडी,
सोया सदियों से, बन्धन का अन्धकार
कैदी की कडियों-सा चट-चटकर टूट गया ।

सदी बिता अट्ठारह सौ सन सत्तावन
नये जागरण गीत लिये उठता आया,
तलवारों का पानी छप-छप चमक उठा
नया ज्वार ले क्वारा खून उमड आया ।

जलती आहों की भीषण ज्वाला जागी
प्राणों की सोई पीडा ललकार उठी,
चुप-चुप सोती सदियों की वह चिनगारी
महाकाल की रुद्र श्वाँस-सी जाग उठी ।

टूटी जजीरें पैरों की हाथों की
बीतीं घडियाँ काराओं की रातों की,
झाँसीगढ का हर पत्थर हर बोल उठा
क्रूर फिरंगी का दुस्साहस डोल उठा ।

नाना ने, ताँत्या ने की 'जयमहादेव'
भारत की लक्ष्मी दुर्गा बन रण मे आई
तोपें गरजीं, अंग्रेजी-झंडा भभक-गया
लुढ़के थे नीली आँखो वाले सिर सारे ।

मुझे याद आता है जलियाँवाला बाग
मेरे नन्हे-मुन्नो पर बरसी थी आग,
भारत की उन माँ बहिनो की पीड़ित-चीख
हर मेरे साथी के मन मे उठती जाग ।

मुझे बताये कोई दुनियाँ का इन्सान
अपनी माँ को कैदी रहने देगा जान,
फिर नारा 'जयहिन्द' तुम्हे क्यो बुरा लगा
दुनियाँ के हत्यारो तुमने किया दगा ।

भूली नहीं अभी ये आँखे रोती हैं
लाठी कोड़ो की सब चोटे सोती हैं,
जेलो की दीवारो ने भी देख लिया
दुनियाँ वालो विजय सत्य की होती है ।

बने दीप नभ के देते हैं नया प्रकाश
भगतसिंह, आजाद, गोखले, तिलक सुभाष,
लालाजी सरदार, तुम्हारा जलता त्याग
है ! बापू है ! राष्ट्रपिता भारत के भाग्य ।

आजादी बनकर आया बलिदान तुम्हारा
घर-घर गूंज रहा है शुभ यशगान तुम्हारा,
नील गगन के नीचे लहर-लहर लहराता
कुर्बानी का ध्वज-तिरंग जयगान सुनाता ।

स्मृति मे बन गये शहीदो के मजार पर
अश्रु-स्नेह-भरे शब्दो के दीप जलाता,
मेरी श्रद्धानत अंजलि स्वीकार करो हे ।
मेरी जननी-जन्म-भूमि के बहुत दुलारे ।

नई रोशनी देते हैं अम्बर के तारे ॥

1955

स्वयं जलो रोशनी लुटाओ दीपक कहता ।
मिटा स्वयं को जल बरसाता बादल बहता ॥
स्वाँति-सलिल ही पाऊँ आन पपीहा गहता ।
प्रीति निभाने को तो स्वयं पतंगा दहता ॥
जो चाहो कल्याण त्याग के सुपथ पर चलो ।
बनना चाहो स्वर्ण-खरा तो स्वयं तुम जलो ॥

तरल तिरंगा लहराओ

मगल वेला स्वर्ण-सवेरा
तरल-तिरगा लहराओ,
मुक्ति-दिवस के अभिनन्दन मे
मगल के स्वर बरसाओ ।

सत्य-अहिंसा, प्रेम-त्याग का
यह प्रतीक फहरे,
अमर शहीदो के मजार का
यह प्रदीप हहरे ।
अपने मन का सरल-स्नेह दो
इसे ज्योति से सरसाओ
तरल-तिरगा लहराओ ।।

इस धरती का मान बढे
इस ध्वज के नीचे शपथ धरो,
श्रम से सींचो सब जन-गण मिल
तन-मन-जीवन सुखद करो ।
जननी-जन्मभूमि भारत का
नमन-गीत मिलकर गाओ ।
तरल-तिरगा लहराओ ।।

नव विकास के पथ पर
सब ससार बढा जाता है,
नये सृजन की सीढी पर
ससार चढा जाता है ।
नव निर्माण करो नवयुग-
के अग्रदूत जय पाओ ।
श्रम से सींचो मिट्टी के-
कण-कण से स्वर्ण उगाओ ।।

मुक्ति-पर्व की पावन वेला-
मे मिल शपथ उठाओ,
जननी जन्मभूमि के बेटो ।
माँ का मान बढाओ ।।
नमन करो शतबार
गगन मे चक्र-ध्वजा फहराओ,
तरल-तिरगा लहराओ ।।

1955

आजादी के लिए जहाँ कुर्बानी दी जाती है ।
उसी देश की पावन माटी चन्दन कहलाती है ।।

मूक शिशिर की रात अँधेरी

मूक शिशिर की रात अँधेरी ।
श्वान भूँकते निर्जन-मग में
व्यथित जागते केवल, जग में,
वात-त्रसित पत्तों के स्वर-सुन
व्यथा जागती मन की मेरी ।
मूक शिशिर की रात अँधेरी ॥

शोषित रे तन, जर्जर रे मन
पीर भरा रे भीगा जीवन,
फिर अन्तर की आह अकेली
आज निराशाओं ने घेरी ।
मूक शिशिर की रात अँधेरी ॥

थकी हुई सोई हैं बाहें
सिसक उठी हैं मन की चाहें,
श्रमिक-जनों के स्वर्णिम दिन की
जाने कब होगी अब फेरी ।
मूक शिशिर की रात अँधेरी ॥

1957



मुक्ति दिवस का गीत

नींव मिल कर नई जिन्दगी की धरो
पीर जननी-जनम-भूमि की सब हरो,
नव सृजन के सभी अब बनो देवता
स्वर्ग अपनी धरा पर स्वय आ रहा ।
ध्वस-उत्पात के मोड को छोड दो
ध्वज-उडाता दिवस मुक्ति-का गा रहा ।।

हाथ के साथ सब हाथ मिल कर उठे
साँस के साथ सब साँस मिल कर जुटे,
श्रम करो अब सभी लक्ष्य को साध कर
त्याग-बलिदान की बात बतला रहा ।
छल-कपट, छूत की छाँह को छोडदो,
ध्वज-उडाता दिवस मुक्ति-का गा रहा ।।

आश के पाश में पीढिया गोद की
फूलती-झूलती वाटिका मोद की,
नाश की श्वाँस से छू न जाये कहीं
हर पिता-मात को सीख सिखला रहा ।
प्रेम के पुण्यमय पथ पर मोडता,
ध्वज-उडाता दिवसमुक्ति-का गा रहा ।।

शूल सताप के प्राण को छू न ले
बिन खिले जल-कुसुम बैन से चू न ले,
भूख की हूक से मूक घर भी न हो
भारती का भुवन गूँजता जा रहा ।
टूटते देश को 'सूत' से जोडलो
ध्वज उडाता दिवस मुक्ति का गा रहा ॥

1958

दीप जलाये रखने को मन का सन्धान जरूरी है ।
सम्मान बचाये रखने को 'स्व' का अभिमान जरूरी है ।।
गौरव से भरा अतीत सजाया दे-देकर कुर्बानी ।
था रक्त-ज्वार तूफान मचाया वह थी मस्त जवानी ।।
नई सदी में अपना मगल-ध्वज फिर फहराना है ।
बिगुल बजाकर विश्व-गगन में नव-स्वर लहराना है ।।

मुक्ति पर्व जय गान

मुक्ति पर्व की पावन वेला मे जयगान सुनाओ ।
नमन करो शत बार, गगन मे चक्रध्वजा फहराओ ।।
स्वर्ण बरसते नीलाम्बर में
फहर-फहर फहराता,
अमर-शहीदो के सपने की
हमको याद दिलाता ।
मुक्ति दिवस की पावन वेला मे सब शपथ उठाओ ।
जननी-जन्मभूमि की पीडा दूर करो सुख पाओ ।।

क्षुधा-कसक-पीडा के भय से
जन-मन म्लान हुआ है,
बेकारी-विध्वंस-पराजय ने
फिर आन छुआ है ।
स्वारथ का सकीर्ण-पथ तज, आपस मे मिल जाओ ।
अपनी धरती के विकास की बाधा दूर भगाओ ।।

प्रेम-त्याग गौरव से पूरित
ये प्रदीप हहरे,
सत्य-अहिंसा का जयदाता
यह प्रतीक फहरे ।
शान्ति-चक्र से सज्जित अपने ध्वज का मान बढाओ ।
नई जिन्दगी के भविष्य की सुन्दर नींव जमाओ ।।

1960

अपना देश

अपना देश है ये- इससे प्यार हमको ।
कोई दुश्मन इस पावन धरती पर कदम बढाये ना
कोई खूनी अपनी आजादी पर आँख उठाये ना,
अपना देश है ये-इससे प्यार हमको ।

पहरेदार हिमालय के कन्धो पै रक्त पडा है,
फिर भी सीमा का रक्षक वह सीना तान खडा है ।
गंगा-यमुना-सिन्धु-नर्मदा अमृत नीर बहातीं,
वीरो की इस धरती के सबको सन्देश सुनातीं ।
ये गौरव का दीप स्वर्णिम दीप है ये-इससे प्यार हमको,
अपना देश है ये-इससे प्यार हमको ॥

वृन्दावन-पनघट के मुरलीधर अब चक्र-उठाओ,
पाञ्चजन्य फिर गूँजे केशव जागृति राग सुनाओ।
शत्रु-दमन का लक्ष्य बताते हमे सुबह औ' शाम,
शील-शक्ति-सौन्दर्य सँजोये अपने राघव राम ।
केशव-राघव राम धरम की जोत हैं ये,
-इनसे प्यार हमको ।
अपना देश है ये -इससे प्यार हमको ॥

अरावली पर मेवाडी राणा रण-रग जमाये
रजपूती केसरिया बाने की फिर से रितु आये,
शत्रु-रुधिर से सनी खडग् की शपथ भरे मरुवाणी
हर मिटनेवाला पा जाये रक्तभरी सैनाणी ।
जौहर मे जलती जो जुग-जुग
बलिदानी उठ जाग, वतन की आग है ये,
-इससे प्यार हमको ।
अपना देश है ये-इससे प्यार हमको ।।

भूख, गरीबी, बेकारी को श्रम-से दूर भगाओ
देश-द्रोह जो करे नराधम सूली उसे चढाओ,
दुश्मन घर के द्वार खडा हो, उसको सबक सिखाओ
अर्जुन-भीम-भीष्म के वशज माँ की लाज बचाओ ।
ये वीरों का देश मुक्ति-सदेश है ये, इससे प्यार हमको ।
अपना देश है ये-इससे प्यार हमको ।।

1967

सकटों से जूझते जो शूर मिलते है ।
कटकों के बीच मानो फूल खिलते है ।।

जाग जाग रे मानस राग

दीप शिखा के स्पन्दन मे
जाग-जाग रे मानस राग ।
बोल उठी युग की शहनाई
जाग उठे रे सोये भाग ।

बीत गई विस्मृति की वेला
आज हँसा रुनझुन का मेला,
आशा के आँगन मे खेला
खिलता मधुर सुहाग ।
जाग-जाग रे मानस राग ॥

प्रीति-निशा झोली भर लाई
गीत-दिशा ने ली अँगड़ाई,
किरणराजि जीवन पर छाई
गाओ मधुर विहाग ।
जाग-जाग रे मानस राग ॥

1970



जागो रे धरती हेलौ देवै (राजस्थानी)

जागो रे धरती हेलौ देवै
आभौ हेलौ देवै ।
सूना सूना धोला धोरा, सूनी बाता हेरै,
झीनो -झीनो बहे बायरो, उजलौ रेत बखेरै ।
काल पडे खेता में फिरता, भूख डागरा सैवे,
गले पडी घटी री टन-टन टन-टन हेलौ देवै ॥
जागो रे धरती हेलौ देवै
आभौ हेलौ देवै ।

मीरा, चन्द, कबीरा, सूरा गाता फेर सुनी जै
धरम दूत वे राम-कृष्ण रा बन्दा सुन-सुन रीझे ।
जातपात रा भेद भूल, सै मिल कर जतन करीजै,
साँझ-आरती, शख-झाँझ री छन-छन हेलौ देवै ॥
जागो रे धरती हेलौ देवै
आभौ हेलौ देवै ।

इण धरती री जायो राणा, इण धरती रौ भामा
इण धरती री जायी पन्ना और पद्मिनी बामा ।
इण धरती री आनबान आपा सै मिलकर सामा,
रगत-भरी हल्दीघाटी री माटी हेलौ देवै ।
जागो रे धरती हेलौ देवै
आभौ हेलौ देवै ।

1972

कोटि कोटि हम आज साथ है

मुक्ति-दीप की ज्योति अमर रखते तरुण रक्त भर-भर,
माँ की गोद सजाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।

हिम का ऑचल धारे, सागर चरण-पखारे,
हमको माँ प्राणो से प्यारी, हम हैं माँ के प्यारे ।
यह धरती अमरो की जननी, इसका कण-कण त्याग भरा,
दमन-चक्र से लडता आया, इसका अणु-अणु आग भरा ।।

गगा-जमुना-सिन्धु सरित का बहता रक्तिम पानी,
बलिदानो की, विश्वासो की कहता अमर कहानी ।
यहॉ मुक्त गुरुद्वारा-मस्जिद-गिरजा और शिवालय,
युग-युग से सबका साथी है पहरेदार हिमालय ।।

सत्य-अहिंसा के मतवाले, आजादी के हम रखवाले,
मुक्ति दीप सरसाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।
माँ की गोद सजाने वाले
कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।।

यह अपनी परिपाटी, कहती हल्दीघाटी,
खून दिया है हमने अपना मगर नहीं दी माटी ।
फाँसी के फन्दो पर झूले, बहुत कटाये हैं सिर
कितना रक्त बहाया हमने आजादी की खातिर ।।

अमर शहीदो की वह टोली तरल-तिरगा लहराती,
आसमान से झाँक रही है, अब तक मस्ती मे गाती ।
भगतसिह, आजाद, गोखले, तिलक, लाजपत और सुभाष
वो पटेल, गाधी और नेहरू लालबहादुर करते आश ॥

हम दुश्मन दहलाने वाले, हँस कर शीश चढाने वाले,
पथ पर कदम बढाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।
माँ की गोद सजाने वाले,
कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ॥

फिर इतिहास पुकारे, जागो देश-दुलारे,
दीप जलाओ आँगन-आँगन, घर-घर द्वारे-द्वारे ।
भूख-गरीबी-बेकारी का अन्धकार ना छाये,
विप्लव-पीडा-अहकार से जन-मन झुलस न पाये ॥

शत-सहस्र प्राणों से वन्दित मूर्ति न खडित हो जाये,
रग-रग के तिनकों का ना नीड विखडित हो जाये ।
हिमगिरि और जलधि की बाँहो में यह बगिया महके,
लक्ष-लक्ष कठों से सिचित मातृवन्दना चहके ॥

बिगडा भाग्य बनाने वाले, बुझते दीप जलाने वाले,
आगे बढते जाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ॥
माँ की गोद सजाने वाले,
कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।

1974



कोटि कोटि हम आज साथ है

मुक्ति-दीप की ज्योति अमर रखते तरुण रक्त भर-भर,
माँ की गोद सजाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।

हिम का आँचल धारे, सागर चरण-पखारे,
हमको माँ प्राणो से प्यारी, हम हैं माँ के प्यारे ।
यह धरती अमरों की जननी, इसका कण-कण त्याग भरा,
दमन-चक्र से लडता आया, इसका अणु-अणु आग भरा ।।

गंगा-जमुना-सिन्धु सरित का बहता रक्तिम पानी,
बलिदानो की, विश्वासो की कहता अमर कहानी ।
यहाँ मुक्त गुरुद्वारा-मस्जिद-गिरजा और शिवालय,
युग-युग से सबका साथी है पहरेदार हिमालय ।।

सत्य-अहिंसा के मतवाले, आजादी के हम रखवाले,
मुक्ति दीप सरसाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।
माँ की गोद सजाने वाले
कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।।

यह अपनी परिपाटी कहती हल्दीघाटी,
खून दिया है हमने अपना मगर नहीं दी माटी ।
फाँसी के फन्दो पर झूले, बहुत कटाये हैं सिर
कितना रक्त बहाया हमने आजादी की खातिर ।।

अमर शहीदों की वह टोली तरल-तिरगा लहराती,
आसमान से झाँक रही है, अब तक मस्ती मे गाती ।
भगतसिह, आजाद, गोखले, तिलक, लाजपत और सुभाष
वो पटेल, गाधी और नेहरू लालबहादुर करते आश ॥

हम दुश्मन दहलाने वाले, हँस कर शीश चढाने वाले,
पथ पर कदम बढाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।
माँ की गोद सजाने वाले,
कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ॥

फिर इतिहास पुकारे, जागो देश-दुलारे,
दीप जलाओ आँगन-आँगन, घर-घर द्वारे-द्वारे ।
भूख-गरीबी-बेकारी का अन्धकार ना छाये,
विप्लव-पीडा-अहकार से जन-मन झुलस न पाये ॥

शत-सहस्र प्राणों से वन्दित मूर्ति न खडित हो जाये,
रग-रग के तिनकों का ना नीड विखडित हो जाये ।
हिमगिरि और जलधि की बॉहों में यह बगिया महके,
लक्ष-लक्ष कर्णों से सिचित मातृवन्दना चहके ॥

बिगडा भाग्य बनाने वाले, बुझते दीप जलाने वाले,
आगे बढते जाने वाले, कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ॥
माँ की गोद सजाने वाले,
कोटि-कोटि हम आज साथ हैं ।

1974



जननी जन्मभूमि का आह्वान है

हिमाद्रि के विशाल शृंग गूँज कर
जागरण का शंख हैं बजा रहे,
सिन्धु के अगाध-कंठ झूम कर
सृष्टि की नई धरा सजा रहे।
त्रस्त गाँव-गाँव औ' नगर-नगर
खोजता नवीन युग-प्रकाश को,
लोकतंत्र अर्थमुक्ति के लिये
तोडता है शोषण के पाश को।
जन-मन मे हुआ नव विहान है,
जननी-जन्मभूमि का आह्वान है॥

सत्य-शिव-सुन्दर के अमृत से
गेह-गेह द्वार-द्वार महकेगा,
शोषण की कारा से मुक्त हो
तृप्ति का नया विहान चहकेगा।
श्रम का अभिषेक श्वाँस-श्वाँस में
ध्येय-पूर्ति-लक्ष्य आँख-आँख में,
कीर्ति-सिद्धि सबकी समृद्धि से
होगी सत्सृजन सवृद्धि से॥
दृढप्रतिज्ञ हुआ प्राण-प्राण है,
जननी-जन्मभूमि का आह्वान है॥

तस्करों के गरल दन्त कील दो
देश-द्रोहियो के पख छील दो,
दो सबक उन्हें जो जमाखोर हैं
भ्रष्ट-घूँसखोर, कर के चोर हैं ।
धर्म-जाति-सम्प्रदाय-भाषा के-
नाम पर जो देश को जला रहे,
प्रगति-तत्र की नवीन राह में
ध्वस-शूल नाश के बिछा रहे ।
उनका अब शीघ्र अवसान है,
जननी-जन्मभूमि का आह्वान है ।।

देश की तरुणाई अब दमकेगी
गीत की अमराई अब गमकेगी,
वीणा के तार मत्र बोलेंगे
तूलिका के स्वप्न सत्य होलेंगे ।
बचपन अब भूख से न रोयेगा
बेबसी बुढापा अब न ढोयेगा,
चक्र इतिहास अब बदल रहा
भ्रमित विश्वास अब सँभल रहा ।
जन-जन में जगा स्वाभिमान है,
जननी-जन्मभूमि का आह्वान है ।।

1975



विष और अमृत

संसार विष है-संसार अमृत है ।
विष संहारक है-अमृत प्रतिपालक है ॥

विष का संतुलित प्रयोग औषध है ।
अमृत का असन्तुलित योग घातक है ।

जीवन का संयमित उपयोग -स्वर्ग है ।
शक्ति का असंयमित प्रयोग -नर्क है ॥

संसार सत्य है, यदि संयममय हो ।
संसार मिथ्या है यदि संयम न हो ॥

संसार शाश्वत है, यदि संयम है ।
संसार नश्वर है, यदि असंयम है ॥

संसार विष है, यदि संयम नहीं
संसार दुर्लभ है, यदि संयम है ॥

संसार विष भी है ।
संसार अमृत भी है ॥

1977



देश के तरुण उठो

देश के तरुण उठो
रक्तमय अरुण उठो,
अब उठो सपूत भारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

तुम उठो हिमाद्रि जाग जायेगा
तुम उठो समुद्र ज्वार लायेगा,
बेबसी की जिन्दगी का कारवा
फिर नया प्रकाश देख पायेगा ।
माग का सिन्दूर छूट जाये ना
राखियो का नेह टूट जाये ना,
गोद में किलक रहा है बालपन
देखना भविष्य रूँठ जाये ना ।

जागरण के ज्योतिदूत
भारती के ओ सपूत,
आँसुओं के बिन्दु ढारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

एक ओर रोशनी दमक रही
एक ओर अन्धकार छा रहा
एक ओर है खडा नया महल
बार-बार झोंपडी गिरा रहा ।

तुम खिलो अवधपुरी महक उठे
वृन्दावन बाँसुरी चहक उठे,
तुम अगर कि केसरिया बाँधलो
जौहर की आग फिर दहक उठे ।

मृत्युजयी ओ प्रवीर
बढ चलो रे विघ्न चीर,
मुक्ति-दीप को सँवारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

प्राण-प्राण को नवीन ज्वार दो
श्वाँस-श्वाँस को सही उभार दो,
आँख-आँख देश की जो रो रही
आँसुओं को पोंछ उसे प्यार दो ।
द्वार-द्वार जो मिले सिसक रहा
बाँह मे झुला उसे दुलार दो,
दीप जो मिले कहीं बुझा-बुझा
नई ज्योति दे उसे उबार लो ।

नवयुग के शक्ति-स्रोत
शत्रुजयी ओ' उदोत,
आज फिर भुजा पसारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

देश के तरुण उठो
रक्तमय अरुण उठो,
अब उठो सपूत भारती
जन्मभूमि माँ पुकारती ।

1978

जाग जाग जाग भारती !

देश के सपूत ओ
जागरण के दूत ओ,
जन्मभूमि माँ पुकारती
जाग-जाग-जाग भारती ।

हो गया प्रभात किन्तु कालिमा हटी नहीं
आँख-आँख रो-रही दरिद्रता घटी नहीं,
द्वार-द्वार आज भी सिसक रहा बुझा-बुझा
अर्थ-त्रस्त जिन्दगी की श्रृखला कटी नहीं ।
तुम चरण धरो, नवीन राह प्राण-मोहती
तुम सजग बनो, नई किरण सहास सोहती,
तुम सुहाग देश के, तुम्हीं विकास देश के
आज फिर प्रवीर, मातृभूमि पथ-जोहती ।।
हो उठी उदास आरती,
जाग-जाग-जाग भारती ।।

क्रान्ति-दूत रक्त-ज्वार मे जगो उभर-उभर
दम्भ ध्वस्त हो चले बहे अह बिखर-बिखर,
शक्ति-स्रोत तुम मचल उठो अगाध सिन्धु-से
स्वर्ण से तपो भविष्य के लिए निखर-निखर ।
नेह माँगती है आज अर्चना की आरती
राखियो की लाज आज फिर तुम्हें पुकारती,
माँग का सिन्दूर माँगता सुहाग आज फिर
बालपन लिए हरेक गोद अश्रु गारती ।

जननी आँचल पसारती,
जाग-जाग-जाग भारती ।

हिमाद्रि के विशाल-श्रृंग ज्योति-पथ दिखा रहे,
अगाध-सिन्धु के कराल-स्वर दिशा बता रहे ।
महान युग नवीन द्वार खोलता खड़ा हुआ
समस्त कंठ फिर प्रचंड अग्नि-गीत गा रहे ।।
प्राण-प्राण कान्हा की बाँसुरी मचल उठे
राघव का शक्ति-शील सुन्दरम् सँभल उठे ।
शोषण के बन्धन से श्वाँस-श्वाँस मुक्त हो
गेह-गेह नेह-का प्रकाश-दीप जल उठे ।
गंगा फिर-फिर गुहारती,
जाग-जाग-जाग भारती।

देश के सपूत ओ,
जागरण के दूत ओ ।
जन्मभूमि माँ पुकारती
जाग जाग जाग भारती ।।

1978

जिस धरती के तरुण स्वयं मिटकर भी आन निभाते हैं ।
उसके बुझते-बुझते दीपक भी फिर से जल जाते हैं ।।

प्रणाम शहीदो को

शतशत बार प्रणाम शहीदो तुम्हे हमारा,
अपना सब कुछ लुटा दिया पर देश सँवारा !
तुमने दीप जलाया तो आबाद हुए हम,
तुमने रक्त बहाया तो आजाद हुए हम !!
शत-शत बार प्रणाम तुम्हे है देश-दुलारो
शत-शत बार प्रणाम तुम्हे है माँ के प्यारो !!!

लो प्रणाम मेरा स्वदेश आजाद कराने वालो
मातृभूमि के चरणो मे निज शीश चढाने वालो ।
देश की खातिर तुमने अरमानो की चिता जलाई,
देश की खातिर तुमने अपनी हँसी खुशी ठुकराई ।।

लो प्रणाम कौमी झडे की लाज बचाने वालो,
मिट-मिट कर भी आजादी का मोल चुकाने वालो ।
छूकर इस धरती को तुमने पावन बना दिया,
रक्त बहाकर मिट्टी को भी कुकुम बना दिया ।।

लिखी हुई सगीनो की नोको पर अमर कहानी
दहक रही अब तक अगारो मे वह मस्त जवानी ।
लो प्रणाम मेरा धरती को स्वर्ण बनाने वालो,
हँसकर फाँसी के फन्दे को गले लगाने वालो ।।

लो प्रणाम मेरा स्वदेश आजाद कराने वालो,
मातृभूमि के चरणो मे निज शीश चढाने वालो ।।

1978

अपना देश महान साथियो

अमर हमारी आजादी है, अमर रहे बलिदान !
अमर शहीदों की समाधि पर मुक्ति दीप के गान !!
साथियो अपना देश महान !

अनगिन प्राण लुटाये हमने तब आजादी आई,
अगणित मिटे सुहाग बिन्दु तब ये खुशियाँ मिल पाईं।
तन-मन-धन न्यौछावर कर भी इसका मान करो है,
लोकतन्त्र के नव भविष्य की सुन्दर नींव धरो है ।।
विश्व मे हो इसका जय गान,
साथियो अपना देश महान !

भूख-गरीबी-बेकारी का अन्धकार ना छाये,
विप्लव-पीडा-अहकार से जन-मन झुलस न पाये ।
नव स्वर हों, नवगीत उदय हों, नव विश्वास जगायें,
श्रम से सींचे वसुन्धरा को, नव इतिहास बनाये ।।
सृजन का हो नव स्वर्ण-विहान,
साथियो अपना देश महान !

वीरो का यह देश, हमारा बाना केसरिया है,
जौहर की लपटों मे ही अपना सिन्दूर जिया है ।
सैनाणी का तप्त-रक्त अब तक सन्देश सुनाता,
तरुणाई को धरती माँ के ऋण की याद दिलाता ।।
करे जन-गन मिल मगल गान,
साथियो अपना देश महान !!

1971

●

स्वागत नूतन वर्ष तुम्हारा

स्वागत नूतन वर्ष तुम्हारा स्वागत, आओ ।
आज मनुजता एक चरण आगे धर पाई
नये दिवस ने नव जीवन को ज्योति दिखाई-
किन्तु गरजते विश्व भूमि पर, जो अशान्ति के धुँधले बादल
उन्हे हटाओ ।
स्वागत नूतन वर्ष तुम्हारा स्वागत आओ ॥

क्षुधा-कसक-पीड़ा-मजबूरी - आह-व्यथाये,
इस धरती पर अब न कहीं भी रहने पाये ।
अपने नूतन साज सजाकर इस वसुधा पर,
शान्तिमयी-स्नेहमयी आभा बिखराओ ।
स्वागत नूतन वर्ष तुम्हारा स्वागत आओ ॥

सींचो सब सूखे तृण, भरदो शक्ति अचेतन मे,
चेतन मे भाव, हरित हो जग का कण-कण ।
मीरा, तुलसी, सूर, जायसी के शीतल-स्वर,
एक बार तो इस जगती पर फिर बरसाओ ।
स्वागत नूतन वर्ष तुम्हारा स्वागत आओ ॥

फिर न करे सन्त्रस्त कहीं विध्वस पराजय,
फिर न उठे हिंसा की भीषण ज्वाला का भय ।
राम-कृष्ण-गौतम-गाधी की इस धरती पर,
जन-जन के मन मे ममता की पीर जगाओ ।
स्वागत नूतन वर्ष तुम्हारा स्वागत आओ ॥

1980

शुभ हो यह नव वर्ष हमारा

शुभ हो यह नव वर्ष हमारा
थकित-हृदय का बने सहारा ।

खुशियो से भर जाये आँचल
मन की पूरी हो सब साधे,
मिट जाये सब सशय-सभ्रम
निर्मल हो फिर धूमिल यादे ।

जर्जर है तन, जर्जर है मन
थका हुआ बोझिल-सा जीवन,
आशा का पर दीप जलाये
अब भी बैठा है बेसुध-मन ।

छोडो हठ, त्यागो निर्ममता
मुरझाया मन-फूल खिलेगा
जीवन नहीं नष्ट करने को
फिर यह जीवन नहीं मिलेगा ।

लेकर फिर सकल्प नये हम
जीवन के पथ पर बढ जाये,
दुखदायी पीडित करने वाली
फिर घडियाँ कभी न आये ।

किसे ज्ञात है क्या होता है जीवन के उस पार
एक बार फिर तुम्हे समर्पित गीतों का श्रृगार ।

1981

मेरे देश वासियो ये हो रहा है क्या ?

इस धरा पै फिर खुशी के दीप जल सके,
इस चमन मे फिर खुशी के गीत खिल सके ।
फिर वतन पुकारता है रक्त दो नया
मेरे देशवासियो, ये हो रहा है क्या ?
मेरे तरुण साथियो, ये हो रहा है क्या ?

कौन ये हवा चली, झुलस गई कली-कली,
जल रहा वतन यहाँ, सिसक-रही गली-गली ।
चीखती है लाज, चीर खिंच रहा सरे बजार,
लुट रहा सुहाग, बुझ रहा है दहकता श्रृंगार ।
कौन मेरे सृजन में विनाश बो गया
मेरे देशवासियो, ये हो रहा है क्या ?
मेरे युवा साथियो, ये हो रहा है क्या ?

गॉव है वही, नगर वही, चहल-पहल वही,
व्यस्त-जिन्दगी के रंग-रूप की गजल वही ।
किन्तु झूठ सत्य को यो सरे आम छल रहा,
सब वही रहा है, किन्तु आदमी बदल गया ।
शेष है धरम, मगर ईमान खो गया ॥
मेरे देशवासियो, ये होरहा है क्या ?
मेरे युवा साथियो ये होरहा है क्या ?

माग का सिन्दूर क्या इसीलिए मिटा-मिटा,
क्या शहीद की इसीलिए सजी-सजी चिता ।
हो गई हरेक गोद शून्य क्या इसीलिए,
इसलिए क्या बन्धुओ को राखियो ने दी विदा ।

आज क्या वह रक्तदान व्यर्थ हो गया ॥
मेरे देशवासियो ये हो रहा है क्या ?
मेरे युवा साथियो ये हो रहा है क्या ?

बोल भगतसिंह बोल-बोल रे तिलक-सुभाष,
नेहरू की आन बोल, बोल गोखले की आश ।
राष्ट्र के पिता कहो कहाँ गया महान त्याग,
रो रही हरेक आँख, द्वार-द्वार है हताश ।
कौन मेरे स्वप्न, दर्द मे डुबो गया ॥
मेरे देशवासियो ये हो रहा है क्या ?
मेरे तरुण साथियो ये हो रहा है क्या ?

कौन है यहाँ जो मेरे आँसुओं को थाम ले,
थक चुके हैं पाँव कौन है मुझे मुकाम दे ।
कौन है उदास-धडकनो की बात जो सुने,
मूक हो गया हूँ कौन है मुझे जुबान दे ।
दीप जो जला बिना प्रकाश हो गया ॥
मेरे देशवासियो ये होरहा है क्या ?
मेरे युवा साथियो ये होरहा है क्या ?

इस धरा पे फिर खुशी के दीप जल सकें,
इस चमन मे फिर खुशी के गीत खिल सके ।
फिर वतन पुकारता है रक्त दो नया,
मेरे देशवासियो ये हो रहा है क्या ?
मेरे तरुण साथियो ये हो रहा है क्या ?

1982

●

नवल वर्ष का अभिनन्दन

आओ हे नवल वर्ष, बार-बार अभिनन्दन ।
द्वार-द्वार दीपित हो, सुख के सब साधन ।।

पुलकित हो गात-गात, मधुर बहे मलय-वात,
बलिदानी धरती पर, स्वर्णिम हो नव-प्रभात ।
सभी हाथ साथ करे, श्रम का आराधन ।।
आओ हे नवल वर्ष

मन मे उमग उठे, पावो मे थिरकन,
जन-जन के जीवन मे, सुख की हो सरगम ।
सास-सास सुरभित हो, बन जाये पावन ।।
आओ हे नवल वर्ष

महक उठे डाल-डाल, जल-पूरित ताल-ताल,
स्वर्ण-बालियो से भरें, खेतो के थाल-थाल ।
हर आँगन बरस उठे, खुशियो के सावन ।।
आओ हे नवल वर्ष

बिछुडे फिर मिले गले, मन का सब तिमिर धुले,
नयन-नयन ज्योति जगे, प्राण-प्राण प्रीति पगे ।
अधर-अधर बोल उठे, गीत मन-भावन ।।
आओ हे नवल वर्ष

आओ हे नवल वर्ष, बार-बार अभिनन्दन ।
गूज उठे वशी ध्वनि, सबके मन-वृन्दावन ।।
आओ हे नवल वर्ष

1985

सूरज हमे बुलाना होगा

दीप जलाकर अन्धकार को भगा न पाये
गीत सुनाकर मन की पीडा भुला न पाये,
जननी जन्मभूमि-वन्दन की थकी आरती
अर्चन की माला के सब प्रसून कुम्हलाये ।

सूरज हमे बुलाना होगा,
फिर से धनुष उठाना होगा ।

सारी राते भीषण भूचालो मे काटी
दिशा-दिशा मे अपनी वैभव निधियाँ बाँटी,
फिर भी बिखर रहा अपना घर पल-पल तिल-तिल
बलिदानो से विचिलित क्रन्दन-करती माटी ।

फिर से शख बजाना होगा,
फिर से चक्र उठाना होगा ।
सूरज हमे बुलाना होगा,
फिर से धनुष उठाना होगा ।

स्वर्ण-बालियों पर फिर अग्नि-मेघ ना छाये
विप्लव के स्वर अम्बर से फिर ना टकराये,
अमृत-पूरित-सर फिर ना लोहित हो पाये
भय-आक्रान्त मरण के स्वर मन ना दहलायें ।

मिल कर भवन बनाना होगा
अब हर द्वार सजाना होगा ।
सूरज हमे बुलाना होगा
फिर से धनुष उठाना होगा ।

ध्वस-शूल के बीच छिपी पाटल की लाली
'जय जवान की-जय किसान की' गूज निराली,
'रक्तबिन्दु अन्तिम इच्छा' स्वदेश रक्षा के-
प्रण से सज्जित है जन-जन के मन की थाली ।
फिर से दीप जलाना होगा,
माँ को अर्घ्य चढाना होगा ।
सूरज हमे बुलाना होगा,
फिर से धनुष उठाना होगा ।

मेघमयी कजरारी पावस रस-बरसाये
हरियाली आभा मनमे सुख-स्वप्न उगाये,
दीपमाल श्रृगार शरद कर नीलाचल मे
हर-आँगन हर-घर सुहाग-सिन्दूर सजाये ।
सबको कठ लगाना होगा,
हृदय-हार पहनाना होगा ।
सूरज हमे बुलाना होगा,
फिर से धनुष उठाना होगा ।

त्याग-भरा इतिहास हमारा करवट लेता
नई शती के दरवाजे पर दस्तक देता,
हिमगिरि और जलधि तक विस्तृत एक राष्ट्र यह
है अखण्ड -अनुपम, अजेय, चिर शक्ति-प्रणेता ।
फिर यह मत्र जगाना होगा,
मिलकर कदम बढाना होगा ।
सूरज हमे बुलाना होगा
फिर से धनुष होगा ।

1990

स्वागत है ऋतुराज

स्वागत है ऋतुराज तुम्हारा स्वागत आओ ।
रग-पर्व पर मन के बिछुडे-मीत मिलाओ ।।

अहकार-जय-गर्व-विमूढित
राग-द्वेष से हुए दिग्भ्रमित,
महानाश से अनुदिन चिह्नित
ध्वस-प्राण से बने सशकित ।
मानव के मन मे ममता की पीर जगाओ ।
स्वागत है ऋतुराज तुम्हारा स्वागत आओ ।।

युद्धोन्माद क्षार कर देगा
जीवन को समूल हर लेगा,
दोनो विजयी और पराजित
मिट जायेगे बने कलकित ।
कौन करेगा राज ? तख्त की होड मिटाओ ।
स्वागत है ऋतुराज तुम्हारा स्वागत आओ ।।

प्यार दया, श्रद्धा परसेवा
सार जगत का पर-दुख-द्रवता,
मिथ्या है विभेद जन-जन का
रक्त लाल है सबके तन का ।
सृजन, नहीं सहार, सार है यह समझाओ ।
स्वागत है ऋतुराज तुम्हारा स्वागत आओ ।।

1991

अमृतमय जीवन हो

जाति-पाँति का भेद न जाने,
ऊँच-नीच की बात न माने,
रूपरंग का फर्क न कर
सबको अपना पहचाने ।
उन्हे न धनका लोभ,
कपट-छल पास न उनके,
प्रेम-प्रीति जो रखते,
वे सब उनके अपने ।
स्वर्ग बने ये धरती अपनी
यदि बच्चों-सा मन हो,
स्वर्ण बने जगती का कण-कण
अमृतमय जीवन हो ॥

1992

प्रीति दुलार सरलता की यदि चाहो परिभाषा ।
बच्चों के मन में झाँको समझो उनकी भाषा ॥

नव वर्ष अभिनन्दन

रहे वर्ष नव हर्ष चिरन्तन ।
जन-जन का मन रहे मुदित
पल-पल क्षण-प्रतिक्षण ।
लोकतन्त्र का हो अभिवन्दन ॥

शोषण की कारा से निकले
चिर-पीडित श्रमजन का जीवन,
अर्थ-मुक्ति का जले दीप
विहँसे हर आँगन ॥

विप्लव-क्रन्दन मिटे
शान्ति का हो फिर विचरण ।
शिवम्-सत्य-सौन्दर्य-
लिप्त हो मानव का मन ॥

रहे वर्ष नव हर्ष चिरन्तन ।

1993

●

अन्धकार के बाद सवेरा आयेगा

विश्वासो का दीप जला है,
आराधन का स्वप्न पला है-
जन-जीवन को आलोकित
कर पायेगा ।
अन्धकार के बाद सवेरा आयेगा ।।

शूलों मे भी फूल खिलेगे,
मन के सब अवसाद टलेगे,
सत्य-अहिंसा की सुगन्ध से-
जग सुरभित हो जायेगा ।
अन्धकार के बाद सवेरा आयेगा ।।

श्रम से पौरुष कभी न हारा,
पर्वत-तोड बहाई धारा,
सयम से ही मानव-
पशुता पर अकुश धर पायेगा ।
अन्धकार के बाद सवेरा आयेगा ।।

1993

●

दीप हूँ माँ भारती की आरती का

चरण-अनुगत पार्थरथ के सारथी का,
दीप हूँ माँ भारती की आरती का ।

सृजन के अथ-से जला हूँ,
मै निरन्तर जल रहा हूँ ।
समय के सच को सँजोता
मैं निरन्तर चल रहा हूँ ।
विगत सदियो मे युगो मे,
हैं अनेको वेश धारे ।
भक्ति-रस, अरिरक्त से
माँ के चरण मैंने पखारे ।।

आँधियाँ आई मिटाने को,
बहुत तूफान आये ।
रक्त-रजित हाथ मे,
विष से सना खजर उठाये ।
आस्था का ओढ आँचल
मैं हमेशा ही बचा हूँ ।
आज भी मैं पूत-सस्कृति
के धवल-पट पर रचा हूँ ।।

नैन मेरे थे नहीं प्रभु ने मुझे लीला दिखाई
नन्द-नन्दन श्यामसुन्दर ने
स्वय वशी सुनाई ।
राधिका के प्राण
मेरे नाथ थे ब्रज-जन-गुसाँई,
भक्तजन-हियहार हरि
अवतार थे मेरे कन्हाई ।।

शक्तिमय सौन्दर्यशाली,
शील-गुण के धाम मेरे ।
लोकरक्षक धर्मधारी,
भक्तवत्सल राम मेरे ।
असुर-सस्कृति पर विजय कर,
सूर्य-कुल-कीरत बढाई ।
विपद-हारन, वचन-पालक,
सर्वदा सतजन सहाई ॥

राज-महलो से विमुख हो,
सन्त-जन के साथ बैठी ।
कन्तमाना साँवरे को,
अन्य मेरा था न कोई ।
भक्ति-पाकर हुई राजी,
देखकर मैं जगत रोई ।
आँसुओ से सींच मैने,
प्रेम की थी बेल बोई ॥

लकुट-कामरिया मुकुट औ'
पीतपट की झलक आगे-
राज तीनो लोक के,
मन्दिर कनक के व्यर्थ लागे ।
नाथ मेरे कान्ह को था,
ग्वालिनी ने यू छकाया-
छाछ छछिया-भर दिखाकर
रीझाकर मन-भर नचाया ॥

राजपूती रक्त-सिंचित,
घाटियो मे घोष गूजा ।
मातृ धरणी की प्रतिष्ठा हेतु-
था मै स्वय जूझा ।
राज-लक्ष्मी से अधिक
है मोल माटी का बताया ।
त्यागकर घरबार मैने
देश पर सब कुछ लुटाया ।।

क्षत्रपति का धर्म पाला था,
मराठी पहन चोला ।
और मैंने मुगल ताकत को,
खडग् से स्वय तोला ।
माँ भवानी ने मुझे आदेश-
बल-विक्रम दिया था ।
देशहित में ही मिटा मैं,
देशहित मे ही जिया था ।।

वीर हरबोलों-बुँदेलो मे-
कही मेरी कहानी ।
मैं वही थी देश रक्षा मे-
मिटी जो एक रानी ।
देश का इतिहास उजला कर सकी,
वह ज्वाल थी मै ।
कौन कहता है मुझे अबला
विकट भूचाल थी मैं ।।

शपथ नौरोजी तिलक औ'
गोखले ने जो उठाई ।
लाजपत, आजाद, सावरकर,
भगतसिंह ने निभाई ।
देशप्रिय बापू, जवाहर,
अमर नेताजी दुलारे ।
और भी थे लाल मेरे बन्धु-
माँ के नयन तारे ॥

मैं अहर्निश देशप्रेमी,
सजग सीमा पर खडा हूँ ।
खेत मे श्रम-बिन्दु बोता,
रोज मौसम से लडा हूँ ।
राज बनते औ' पलटते-
देखता कब से रहा हूँ ।
नाम युग के साथ अपने-
मैं बदलता ही रहा हूँ ॥

जलधि से हिम पर्वतो तक,
पूर्ण भारत देश मेरा ।
युगयुगो से विश्व को-
जिसने दिखाया है सवेरा ।
है अजित अनुपम सलौनी,
माँ धरा यह परम प्यारी ।
नेह जिसका नित्य पाती,
गोद की सन्तान सारी ॥

रक्त की हर बूँद पर है,
सर्वदा अधिकार माँ का ।
आँख उसकी खींच लूगा,
इस तरफ यदि शत्रु झाँका ।
राष्ट्र-रक्षा के लिये है-
भीष्मवत् यह शपथ मेरी ।
प्राण यदि देने पडे,
तैयार हूँ, पल की न देरी ॥

दीप्त नयनो से सुपथ-
निहारती का,
रिपु-दमन के हेतु-
आयुध भारती का ।
निज-जनो पर करुण दृष्टि
पसारती का,
दीप हूँ माँ भारती की आरती का ॥

1996

वाणी के चरणों में अर्पित है गीतों का हार ।
शब्द-छन्द-रस-अलकार का मन-भावन ससार ॥

है सारा कश्मीर हमारा

हमको प्राणो से भी प्यारा,
है सारा कश्मीर हमारा ।

भारत का यह मुकुट मनोहर,
यहीं स्वर्ग की विपुल धरोहर ।
इन्द्रधनुष सस्कृति से सज्जित,
अनुपम अतुलनीय नारी-नर ।

फूलो के हैं हार सुगधित,
केसर की है घाटी प्यारी ।
शहद भरी है डाली-डाली,
हरी-भरी है क्यारी-क्यारी ।

सेवो पर बहार जब आती,
बच्चो पर लाली छा जाती ।
अखरोटो के झुरमुट हँसते,
मेवाओ के बाग महकते ।

दर्पण-सी मीठी-झीलो पर,
मस्त शिकारे झिलमिल करते ।
बोटो की बस्ती के पीछे,
चपल किनारे खिल-खिल करते ।

परमीने के शाल सुहाने,
श्रमजन का करते जयगान ।
कला-सृजन की मुस्कानों की,
जादूभरी मृदुल पहचान ।

नील-गगन के स्वच्छ मंच पर,
बतियाते बादल छै-सात ।
नीचे हिम की धवल शिखरियाँ,
गपशप करती हैं दिन-रात ।

धरणि-गगन के मीलित अधरों पर -
सोया शिशु सा नादान ।
क्षितिज-पवन की शीत थपकियों-
में सोता बिल्कुल अनजान ।

शालीमार-निशात स्वर्ग से-
उतरे पहरेदार खड़े हैं ।
चुस्त किनारों की पल्टन के सेना-
नायक सबल अड़े हैं ।

खबरदार जो किसी शत्रु ने,
इस धरती पर पैर पसारे ।
खबरदार यदि बैरीजन ने,
नजरों से भी छुए किनारे ।

खबरदार इस कश्यप की-
पावन धरती पर कदम बढ़ाये ।
खबरदार शंकराचार्य की
तपस्थली पर शूल उगाये ।

आँख उठाई इधर जरा भी,
किसी विषैले खूनीजन ने ।
कोमल हैं जो फूल यहाँ के-
दहकेंगे अगारे बनके ।

हरियाली वाली डाली सब,
भीषण विषधर बन जायेगी ।
जल कर गरजेगी घाटी भी,
मीठी झीलें गरमायेगी ।

टूट गिरेंगे हिमपर्वत भी,
ध्वसक-ज्वाला बरसायेंगे ।
लहरें नागिन बन जायेगी,
धू-धू कर तट जल जायेंगे ।

हिमगिरि और जलधि तक विस्तृत,
है अखड यह देश हमारा ।
हर भारतवासी का अपना,
सारा यह कश्मीर हमारा ।

1996

रूप का झरना बहा करता जहाँ
जिन्दगी खुद गुनगुनाती है वहाँ ।
स्वर्ग धरती पर उतर-आया जहाँ
वह यहाँ है वह यहाँ है वह यहाँ ।।

जागो मेरे तरुण साथियो

जागो मेरे तरुण साथियो,
आज बदल दो युग की धारा ।
फिर स्वदेश की पावन माटी ने-
क्रन्दन कर तुम्हे पुकारा ।

फिर आवाज दे रहा नगपति,
बुला रहा सागर का गर्जन ।
गूँजी फिर हुकार गगन मे,
तमक रहे गाण्डीव, सुदर्शन ।
जागो भीम-भीष्म के वशज,
तडप रहा है देश तुम्हारा ॥
फिर स्वदेश की पावन माटी ने-
क्रन्दन कर तुम्हें पुकारा ।

दूषित कर इतिहास न कोई,
मर्यादा को करे कलकित ।
गगा-यमुना जल से पावन,
अब तो जन-मन बना सशकित ।
जागो युग के शक्ति सूर्य, है-
तुम्हे वक्त ने फिर ललकारा ॥
फिर स्वदेश की पावन माटी ने-
क्रन्दन कर तुम्हे पुकारा ।

कसम तुम्हे है तरुणाई की,
तप्त-रक्त की अरुणाई की ।
कसम तुम्हे है देशभक्ति की,
प्रबल ओजमय युवा शक्ति की ।
तुम हो लोकतन्त्र के प्रहरी,
तोडो अब शोषण की कारा ॥
फिर स्वदेश की पावन माटी ने-
क्रन्दन कर तुम्हे पुकारा ।

क्रूर-स्वारथी-हिंसक पंजे,
मातृभूमि का चीर हर रहे ।
अहंकार मे मूढ दरिंदे,
जर्जर तन मे पीर भर रहे ।
देखो उठी न्याय की चाबुक,
थाम न ले कोई हत्यारा ॥
फिर स्वदेश की पावन माटी ने-
क्रन्दन कर तुम्हे पुकारा ।

अब भी जाग नहीं तुम पाये,
तन की आग न दहका पाये ।
मान देश का मिट जायेगा,
यहाँ लोकमत बिक जायेगा ।
गिरवी फिर रख देंगे दुश्मन,
सोने का यह देश हमारा ॥
फिर स्वदेश की पावन माटी ने-
क्रन्दन कर तुम्हे पुकारा ।

1996

जनम-जनम तक

आज की बरसाती हवा
खेल मगन बालिका की तरह
यादों के खिलौने बिखेरती जारही है।
एक-एक करके
सबके सब।
हथेलियों को फैलाकर
नन्हीं-नन्हीं बूँदों को नचाते थे हम
उन पर।
बादल और बिजली की
देख-देख आँख मिचौली
आत्म विस्मृत हो जाते थे हम।
शोर मचाते नाले पर
परनालों की गूँज में
हमें लगता था
महफिल से घिरे हुए थे
उस एकान्त में भी हम।
दूरागत बंशी की धुन
नये सपने बुन जाती थी,
अँधेरा सुहाता था- रोशनी सताती थी।
वृक्षों से लिपटी बल्लरियाँ
अपनी-सी लगती थीं।
कितना जी चाहता था कि
बूँदों की झड़ी
कभी न रुके-कभी न थके
जीवन भर
जनम-जनम तक।

1992

विवशता

साँझ की डगर पर
बढती उमर पर,
यादे घिर आईं आज फिर वैसे ही-
जैसे रिमझिम घटायें सावनी आकाश पर गहराई
है ।
काफी पहले-
तुम्हारी पीठ पर माथा टिकाकर
जब मैने बरसाती गीत
गुनगुनाया था-
तो
मन-प्राण नश्वर शरीर को त्याग कर
किसी अचीन्हे, अनजाने लोक में
जा छिपे थे ।
बरसाती शीतलता आज फिर
रोम-रोम मे
वैसी ही अनुभूति जगा रही है-
लग रहा है कि
बादलो से झाँककर
तुम
अपनी उपस्थिति से
रससनात कर रही हो ।
आत्म विस्मृत मैं

जनम-जनम तक

आज की बरसाती हवा
खेल मगन बालिका की तरह
यादो के खिलौने बिखेरती जारही है ।
एक-एक करके
सबके सब ।
हथेलियो को फैलाकर
नन्हीं-नन्हीं बूँदो को नचाते थे हम
उन पर ।
बादल और बिजली की
देख-देख ऑख मिचौनी
आत्म विस्मृत हो जाते थे हम ।
शोर मचाते नाले पर
परनालो की गूँज मे
हमे लगता था
महफिल से घिरे हुए थे
उस एकान्त मे भी हम ।
दूरागत वशी की धुन
नये सपने बुन जाती थी
अँधेरा सुहाता था- रोशनी सताती थी ।
वृक्षो से लिपटी बल्लरियाँ
अपनो-सी लगती थीं ।
कितना जी चाहता था कि
बूँदो की झडी
कभी न रुके-कभी न थके
जीवन भर
जनम-जनम तक ।

1992

विवशता

साँझ की डगर पर
बढती उमर पर,
यादे घिर आई आज फिर वैसे ही-
जैसे रिमझिम घटाये सावनी आकाश पर गहराई
हैं ।
काफी पहले-
तुम्हारी पीठ पर माथा टिकाकर
जब मैने बरसाती गीत
गुनगुनाया था-
तो
मन-प्राण नश्वर शरीर को त्याग कर
किसी अचीन्हे, अनजाने लोक मे
जा छिपे थे ।
बरसाती शीतलता आज फिर
रोम-रोम मे
वैसी ही अनुभूति जगा रही है-
लग रहा है कि
बादलो से झाँककर
तुम
अपनी उपस्थिति से
रसस्नात कर रही हो ।
आत्म विस्मृत मैं

अँधियारी रिमझिम मे-एक बार फिर
वही बरसाती गीत
गुनगुनाना चाहता हूँ ।
हाय ।
कैसी विवशता है-
तुम्हारे इतने पास हूँ-
फिर भी इतनी दूर हू ।

1992

घडी

घडी की टिक-टिक
ताँगे की तिक-तिक
चलती ही रहती है
सबसे कुछ कहती है ।
चाबी रुक जाये तो
दाना चुक जाये तो
चाल बन्द हो जाये
दुनियाँ सब खो जाये ।

1992



जिये जो, सो जाने

सारा जीवन उपेक्षा-अभाव में जीना,
किसी के अहकार के तले दबे रहना ।
तिल-तिल सिमिटना और मरते जाना,
विवशता के तले घुटते रहना-मिटते जाना ।
कैसा अनुभव है यह-जो जिये सो जाने ।।

1990

सच है

अब अहसास हुआ,
जो सोचा था कि सम्भव होगा-वह कभी न होगा
अब अहसास हुआ ।
सारा सफर तनहाइयों में पूरा करना होगा,
तब तक था आराम कि साथ मिलेगा ।
ओह, पतझड आ गया
पछी सब उड गये,
अब अहसास हुआ कि यही सच है
बस यही सच है ।

1990

सूखा फूल

बिना पत्ते की कँटीली डाल के फूल, सूखे-फूल ।
जब सुवास थी-पराग था-रूप था
वह सब खत्म हुआ तो तुझे होश आया-
कि कोई तितली, कोई भौंरा नहीं मुडेगा इधर,
हवा भी चलेगी तो बिखराने के लिए-
क्योंकि तू अब सिर्फ सूखा फूल है ।

1990

ठूँठ

बिना पत्तो की टहनी के शुष्क वृन्त !
हर ओर मे पछी कलरव करते थे-
तुझ पर मँडराते थे,
पथिक छाया मे ठहर थकान मिटाते थे ।
अब कोई पक्षी नहीं आयेगा-
कोई राहगीर नहीं रुकेगा-
क्यो कि अब तू सूखा हुआ ठूठ है
बस ठूठ ।

1990

यह भी ठीक है

यह भी ठीक है-
चलते-चलते
अचानक मुझे लगा
वह पीछे आया,
साथ आगे चलने वाला
बोला
काटेगा नहीं ।
मैंने कहा- कुत्ते का क्या भरोसा,
यह भी ठीक है
उसने कहा ।

1991

बीतता जीवन

कितनी देर हो गई
घुप्प अँधेरा है ।
बिजली अब नहीं आयेगी,
पानी भी नहीं आयेगा ।
किसको कहे,
कौन सुनेगा ?
रोज का किस्सा है ।
धीरे-धीरे ऐसे ही
जीवन बीत जायेगा ।
1991

उस दिन

ममता के आँसू
हिला गये जीवन का ओर-छोर,
आँचल से बँधा वात्सल्य
मुस्कानों के साये में पला कैशोर्य
और खिलती तरुणाई,
कलेजे से निकालकर
सौंप दी जिस दिन-
अनजाने हाथों में
उस दिन ।

1991

अनाश्रित

बूँद-बूँद रिसता है पानी
कोठरी की छत से
है बहुत पुरानी ।
कोनों में बहती धारें
बढ़ती जातीं अधिक दरारें,
अब-तब गिरेंगी जरूर दीवारें ।
फिर कहाँ जायेंगे
ये थके हारे
अनाश्रित बेचारे ।

1991

चिड़ी बल्ला

गली बीच गली मे
आम रास्ते पर खेलते हैं वे चिडी बल्ला ।
बिना नैट बिना लाइनिंग ।
बस फेकते है चिडिया को
जोर-जोर से ऊपर-ऊपर
इधर से उधर
उधर से इधर
और हर्षातिरेक मे
खिल-खिल पडते हैं-
वे सब जो खडे होते हैं
खिलाडियो के
कुछ इधर
कुछ उधर ।
1991

दर्पण

अहम् हो
कोई वहम हो
तो
दर्पण दिखाओ
दूर-पास लाओ
घूम कर बताओ ।
कुछ समझ आयेगा
काम बन जायेगा ।
1991

मेरी गुडिया

मेरी गुडिया है यह
अचानक होगई बीमार ।
सारी दवा की हैं
होम्योपैथी-ऐलोपैथी,
लगी नहीं कोई-
अब दी है यूनानी ।
ठीक करदो प्रभो,
मैं हूँ निराश-हताश ।
प्रार्थना में बल है तो
सुनो और स्वस्थ करदो
मेरी गुडिया-
यह है मेरे वत्सल मन की ज्योति ।

1991

आज की सध्या में

आज की सध्या में-
सामने वाली ऊँची बिल्डिग की पिछली मुडेर पर
कौआ शान से बैठा है ।
बादल घिर-घिर कर आरहे हैं-
चिडिया बेचारी रैन-बसेरे के लिए
लगातार भटक रही है-
काश मैं उसकी कुछ मदद कर पाता
आज की सध्या मे ।

1992

एक टुकडा

एक बार मिल गया टुकडा एक
तब से रोजाना
द्वार खटकते ही वह दौड पडता है-
और देखता है- तृषित दृष्टि से
शायद फिर मिलेगा-एक टुकडा,
पर मिलती है- दुत्कार ।
यही क्रम चल रहा है
मुद्दत से-
और वह निहारता है प्रतिदिन,
हर बार-हर खटके पर
शायद फिर मिलेगा टुकडा एक ।

1991

माटी का रंग

चटक गुलाबी
छोटा सा फूल,
घास के गमले मे
आज ही जन्मा है ।
देखा तो देखते ही
रह गया दग-
कैसा अपूर्व है
माटी का रग ।
1991

विवशता

मैंने देखा- वह दुल्हिन थी
सजी-सजी नई नवेली दुल्हिन ।
गुडिया थी वह – कोमल कमनीय
प्रफुल्लित अबोध और निरीह ।
जब पहले देखा था उसे मैंने
साथ था उसके जो वो बेमेल सा-
कैसे हुआ यह ?
कैसी मजबूरी थी ?
पिता स्वर्गवासी होगया जो
उसकी राजकुमारी थी वह,
किसी राजकुमार को सौंपने के लिए ।
पर कैसी बिडम्बना है-
जो मिला वही सही,
कैसी विवशता रही होगी वह
अनकही ।

1991

●

गलत मोड मुड गया

मंजिल कैसे मिलती मुझको
मैं गलत मोड मुड गया ।
मैंने खुदा समझकर जिसे सिजदा किया
वह बस बुत निकला ।
मैं समझता हूँ- तुम्हारी मजबूरियो पर मैं बेबस
होगया हूँ ।
मैं स्वय को असहाय-असमर्थ अनुभव करता हूँ ।
चारो ओर अँधेरा है
कुछ भी नजर नहीं आरहा
चाहता हूँ कोई आशा की किरण मिले-पथ मिले ।
मैं समर्पित हो चुका हूँ तुम्हारी धरती को-
अब कहाँ जाऊँ ?
आधा-अधूरा जीवन-न घर न परिवार
नाव बह रही है बिना पतवार ।
चाह थी छोटा ही हो पर अपना घर हो ।
अब सब अर्थहीन होगया-कोई साध पूरी न हुई
दोष मेरा अपना है- मैं गलत मोड मुड गया ।
तुम्हारी उदारता काबिले तारीफ है ।
पर बहुत मँहगी पडी है- तुम्हें भी मुझे भी ।
क्योकि मैं तुम्हारी पीडा से पीडित होरहा हूँ,
मैं महसूस कर रहा हूँ- मैं अशक्त होगया हूँ ।
अकेले झेलनी पड रही हैं सारी परेशानियाँ तुम्हे-
कोई साथ नहीं देरहा-मैं भी नहीं- अशक्त जो हूँ
पर चाहता हूँ अन्तर्मन से कि मुझे शक्ति मिले-
मैं तुम्हारी सभी पीडाये हर लूँ ।
1991

एक कार

एक कार धुऑ उडाती
दनदनाती भीड चीर कर भागती मिली ।
मैं सहमा
लगा कि
सर्वहारा वर्ग की छाती को रौंदती जाती
वह पूँजीवादी प्रवृत्ति ही थी ।

1992

मजबूरी

लू के लाल तप्त लोहे से थपेडे-
सहन करते भी जाना पडता है काम पर
मजबूरी है
नौकरी है ।
काश कि उनकी तरह होते हम भी
कूलर की बाँहो मे
नींद की गोद में ।

1992

●

आँसू

समर्पण से सिक्त मेरे स्नेहमय संगीत हो तुम ।
प्राण मे झंकृत सदा ही अश्रु मेरे मीत हो तुम ।।
गीतमय स्वर से सुपरिचित,
वारिमय निश्वास निर्मित ।
सजल-पलको पर सजे चिर-
प्रीति-युक्त पुनीत हो तुम ।

1992

क्या समझे

तू-तू-तू
एक रोटी का टुकडा लिये आई है
वह अबोध बालिका ।
उसे अपने साथ अपने घर लेजाना चाहती है-
लालच दे रही है उसे
एक टुकडा रोटी का-
नहीं गया मगर वह ।
उसका कौंना-उसका घर
उसकी माँ उसका भाई
और वह दोस्त बछिया ।
क्या समझे ?

1992

एक शूल

मेरे ह्रदय मे अक्सर एक शूल चुभता रहता है ।
यह चुभन भी सुखदायी है-
याद दिला जाती है
वह मेरा, जो सचमुच था नहीं मेरा ।

1992

उमड़ते आँसू

आँसू जब एक बार उमड पडते हैं
तो रुकते नहीं ।
आते ही रहते हैं ।
कभी सुख मे
कभी दुख मे ।

1992



बलात्कार

बलात्कार पशुता है- शारीरिक दस्युता है
इच्छाओ का बलात्कार कम पशुता नहीं ।
दूसरो की इच्छाओ आकाक्षाओ को अपने अनुरूप बनाना
यह भी बलात्कार है – इच्छाओ का बलात्कार ।

1992

मूरखता–सफलता

जो मिल नहीं सकता उसकी कामना करना
चिर प्रतीक्षा करना – यही तो मूरखता है ।
जो मिल रहा है उसकी उपेक्षा करना–तिरस्कार करना
यह भी तो मूरखता है ।
उसे चाहो जो मिल रहा है- जो मिले नहीं उसे भूल जाओ
यही श्रेयस्कर है – यही सफलता है ।

1992

काश

रास्ते के लोग सब मुड गये है,
रास्ता लुभावना है ।
कदम भी बढ रहे हैं,
काश एक कोई तो साथ होता ।

1992

हमसे अच्छे है

काली सफेद कुतिया के
काले सफेद पिल्ले दो ।
द्वार खटकते ही फुदकते आते हैं-
एक टुकडे की आश लिये ।
उनकी माँ दूर बैठी टुकुर-टुकुर देखती रहती है उन्हे ।
इसी सामने वाले कौने मे जन्मे थे वे,
यही इनका घर है – यही ससार ।
ओह देखो – सोती हुई बछिया की पीठ पर जा सोया एक
पहरा दे रहा है दूसरा
कैसा वात्सल्यमय जीवन है इनका
बुरा मत मानो – ये हमसे अच्छे हैं ।

1992

परीक्षा मे

बालिका विद्यालय के अहाते मे खुला मैदान
सिहराने वाली ठडी हवा से बचती गुनगुनी दोपहर।
बीच मे- पीपल पर कौवों की आवाज
दाना खोजती गिलहरी की फुदक-फुदक,
बतियाती अद्भुत शान्ति ।
सामने वाली सडक अपने रास्ते पर निरन्तर बढती
जाती है ।
सामने की बिल्डिंग पर लहराती धूप ।
दूर घर की चिमनी से उठता हुआ धुआँ ।
शायद भोजन बनाने का जुगाड अभी हो पाया है ।
सुबह का निकला गृह स्वामी शायद अभी लौटा है ।
मजदूरी से मिला राशन लेकर अभी पहुँचा है शायद,
आज बच्चे भूखे ही स्कूल आये होगे ।
अर्द्धवार्षिक परीक्षाये हैं न – परीक्षा देने ।
उधर ऊँची सीढियो पर तिरगा फहरा रहा है-
शान से ।
मन का आकाश गहरा रहा है – इस वर्तमान से ।

1994



आओ १९९४

१९९४ आओ
पर सलीके से- आदमी की तरह
९३ की तरह नहीं ।
चाहे धोती अँगरखी में
चाहे पायजामा शेरवानी मे
चाहे टोपी फैज या पगडी मे
चाहे दाढी-मूँछ चोटी मे या नगे सिर
पर सलीके से- आदमी की तरह
९३ की तरह नहीं ।
आओ गाते बजाते या चुपचाप
आयते पढते या करते मंत्र जाप
पर चीखते-चिल्लाते नहीं
दर्द से बिलबिलाते नहीं
हँसते मुस्कराते पर करते नहीं अट्टहास
आओ पर सलीके से आदमी की तरह
९३ की तरह नहीं ।
सबकी निगाहें तुम पर हैं-
गाँव की, नगर की
मछली की, मगर की
चिडिया की, अजगर की
नौकर की, अफसर की
पाटी की, अक्षर की
निर्धन की, तस्कर की
बचपन की, यौवन की
दूध की, दारू की
घरेलू-बाजारू की ।
शकित हैं विस्मित हैं सबके सब-
आओ तुम आओ तुम १९९४ पर सलीके से
आदमी की तरह
९३ की तरह नहीं ।
1993



श्री श्याम श्रोत्रिय

जन्म आपाढ कृष्णा चतुर्थी सम्वत् १९८८ वि अजमेर म।

शिक्षा एम ए हिन्दी (आगरा-राजस्थान) बी एस सी (बॉयलोजी) बी एड साहित्यरत्न, धर्मविशारद।

सेवा राजस्थान शिक्षा सेवा के प्राचार्य (स्कूल) पद से सेवानिवृत्त।

सम्पर्क सूत्र वल्लभसखा सदन, पडित निवास, बल्ला गली,
तिलक द्वार, मथुरा-281001 फोन 402073

विशेष श्री श्याम श्रोत्रिय ब्रज साहित्य के इतिहास में सुप्रतिष्ठापित, उत्तरी भारतेन्दु कालीन प्रसिद्ध ब्रजभाषा कवि पडित ब्रज वल्लभदेव श्रोत्रिय 'वल्लभ सखा' के प्रपौत्र हैं। लाडनूँ (नागौर-राजस्थान) उनकी साधना-स्थली रही है। राजकीय शिक्षा-सेवा म रत रहने के कारण लगभग तीन युगो तक वे वहाँ की शैक्षिक साहित्यिक व सास्कृतिक गतिविधियों से जुडे रहे। अपने ओजस्वी व्यक्तित्व और साधनापरक मधुर व्यवहार के कारण वे समूचे अचल में अत्यन्त लोकप्रिय रहे हैं। श्री श्रोत्रिय के गद्यगीतात्मक व साहित्यिक निबन्ध, कविता, कहानी व सस्मरण शिक्षा विभाग राजस्थान के प्रकाशन परिक्षेप प्रस्तुति, प्रस्थिति सन्निवेश, कैसे भूलूँ, मरुअचल के फूल व विभिन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। वे शोध सामग्री सकलित वल्लभ-काव्य-विभा के प्रथम एव द्वितीय खण्ड का सम्पादन कर चुके हैं। श्री श्रोत्रिय वर्षों तक आकाशवाणी जोधपुर से अपने मधुर गीतों का पाठ करते रहे और अब वे आकाशवाणी मथुरा से भी जुड गये हैं।